विशद
श्री धर्मनाथ विधान

धर्मनाथ विधान का मण्डल

मध्य में - ॐ
प्रथम वलय - 6
द्वितीय वलय - 12
तृतीय वलय -24
चतुर्थ वलय - 46
पंचम वलय - 48
कुल अर्घ्य- 170

रचयिता :
प.पू. क्षमामूर्ति 108 आचार्य विशदसागरजी महाराज

कृति – विशद श्री धर्मनाथ विधान
कृतिकार – प.पू. साहित्य रत्नाकर, क्षमामूर्ति
आचार्य श्री 108 विशदसागरजी महाराज
संस्करण – द्वितीय–2015
प्रतियाँ – 1000
संकलन – मुनि श्री 108 विशालसागरजी महाराज
सहयोग – क्षुल्लक श्री 105 विसौमसागरजी,
क्षुल्लिका श्री भक्तिभारती, क्षुल्लिका श्री वात्सल्य भारती
संपादन – ब्र. ज्योति दीदी (9829076085) , आस्था दीदी
9660996425, सपना दीदी
संयोजन – आरती दीदी, उमा दीदी • मो. 9829127533
प्राप्ति स्थल – 1 जैन सरोवर समिति, निर्मलकुमार गोधा
2142, निर्मल निकुंज, रेडियो मार्केट, मनिहारों का रास्ता, जयपुर
फोन : 0141–2319907 (घर) मो.: 9414812008
2. श्री राजेशकुमार जैन ठेकेदार
ए–107, बुध विहार, अलवर मो.: 9414016566
3. विशद साहित्य केन्द्र
C/o श्री दिगम्बर जैन मंदिर कुआँ वाला जैनपुरी
रेवाड़ी (हरियाणा) प्रधान–09416882301
4. विशद साहित्य केन्द्र–हरीश जैन
जय अरिहंत ट्रेडर्स, 6561 नेहरु गली, नियर लाल बत्ती चौक
गाँधी नगर, दिल्ली मो. 981815971, 9136248971
मूल्य – पुनः प्रकाशन हेतु 21/– रु. मात्र

:– अर्थ सौजन्य :–
श्रीमती लादी देवी के पुत्र श्री रमेशचन्द-श्रीमती मनोरमा, श्री धर्मचन्द-श्रीमती रंजना
श्री ऋषभ-श्रीमती अवनि जैन परिवार (पीलिया वाले)
49, विष्णुपुरी, महावीर नगर, जयपुर मो. 9829014976, 2723287
मुद्रक : राजू ग्राफिक आर्ट (संदीप शाह), जयपुर • फोन : 2313339, मो.: 9829050791

तीर्थंकर स्तवन

दोहा– **धर्मनाथ भगवान का, करते हम गुणगान ।**
विशद ज्ञान को प्राप्त कर, मिले शीघ्र निर्वाण ॥

(शम्भू छन्द)

परम पवित्र श्रेष्ठ शोभामय, भवि जीवों को मंगल रूप ।
नित्य निरन्तर उत्सव संयुत, परम अद्वितिय तीर्थ स्वरूप ॥
अनुपम तीन लोक के भूषण, धर्मनाथ की शरण मिले ।
चरण कमल में श्री जिनेन्द्र के, वन्दन कर मम हृदय खिले ॥१॥

मात सुव्रता भानुराय गृह, जन्मे धर्मनाथ भगवान ।
रत्नपुरी को धन्य किए प्रभु, गिरि सम्मेदशिखर निर्वाण ॥
तीर्थंकर पद पाने वाले, जगत विभू कहलाए नाथ ।
पद पंकज में 'विशद' भाव से, झुका रहे हम अपना माथ ॥२॥

पंच योजन का समवशरण है, धर्मनाथ का अतिशयकार ।
तप्त स्वर्ण सम आभा तन की, वज्रदण्ड लक्षण मनहार ॥
दिव्य कमल शोभा पाता है, गंध कुटी पर श्रेष्ठ महान ।
अधर विराजे सिंहासन पर, दर्शन दें चउ दिश भगवान ॥३॥

आयू है दश लाख वर्ष की, छियालिस मूलगुणों के नाथ ।
एक सौ अस्सी हाथ प्रभू का, अवगाहन भी जानो साथ ॥
ॐकार मय दिव्य ध्वनि है, प्रभु की जग में मंगलकार ।
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ा हम, वन्दन करते बारम्बार ॥४॥

'अरिष्ट सेनादिक' तैंतालिस, धर्मनाथ के कहे गणेश ।
अन्य मुनीश्वर ऋद्धीधारी, धारे स्वयं दिगम्बर भेष ॥
दुखहर्त्ता सुखकर्त्ता ऋषिवर, हुए जहाँ में करुणाकार ।
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाकर, वन्दन करते हम शत् बार ॥५॥

इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिं क्षिपेत्

श्री धर्मनाथ जिनपूजन

स्थापना (वीर छन्द)

हे धर्मनाथ ! हे धर्मतीर्थ !, तुम धर्म ध्वजा को फहराओ ।
तुम मोक्ष मार्ग के नेता हो, प्रभु राह दिखाने को आओ ॥
तुमने मुक्ती पद वरण किया, तव चरणों हम करते अर्चन ।
मम हृदय कमल के बीच कर्णिका, में आकर तिष्ठो भगवन् ॥
भक्तों ने भाव सहित भगवन्, भक्ती के हेतु पुकारा है ।
न देर करो उर में आओ, यह तो अधिकार हमारा है ॥

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथ जिनेन्द्र ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं ।
ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथ जिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् ।
ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथ जिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितौ भव-भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

(सखी छन्द)

हम निर्मल जल भर लाएँ, चरणों में धार कराएँ ।
जन्मादिक रोग नशाएँ, भव सागर से तिर जाएँ ॥
जय धर्मनाथ जिन स्वामी, तुम हो प्रभु अन्तर्यामी ।
तव चरण शरण को पाते, प्रभु चरणों शीश झुकाते ॥१॥

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दन यह श्रेष्ठ घिसाए, पद में अर्चन को लाए ।
संसार ताप विनशाएँ, भव सागर से तिर जाएँ ॥
जय धर्मनाथ जिन स्वामी, तुम हो प्रभु अन्तर्यामी ।
तव चरण शरण को पाते, प्रभु चरणों शीश झुकाते ॥२॥

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय संसारताप विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

हम अक्षय अक्षत लाए, अक्षय पद पाने आए ।
प्रभु अक्षय पदवी पाएँ, भव सागर से तिर जाएँ ॥

जय धर्मनाथ जिन स्वामी, तुम हो प्रभु अन्तर्यामी ।
तव चरण शरण को पाते, प्रभु चरणों शीश झुकाते ॥३॥

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अक्षयपद प्राप्ताय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

उपवन के पुष्प मँगाए, प्रभु यहाँ चढ़ाने लाए ।
प्रभु काम बाण नश जाए, भव से मुक्ती मिल जाए ॥
जय धर्मनाथ जिन स्वामी, तुम हो प्रभु अन्तर्यामी ।
तव चरण शरण को पाते, प्रभु चरणों शीश झुकाते ॥४॥

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय कामबाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

ताजे नैवेद्य बनाए, हम क्षुधा नशाने आये ।
प्रभु क्षुधा रोग नश जाए, भव सागर तरने आए ॥
जय धर्मनाथ जिन स्वामी, तुम हो प्रभु अन्तर्यामी ।
तव चरण शरण को पाते, प्रभु चरणों शीश झुकाते ॥५॥

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हम मोह नशाने आए, अनुपम यह दीप जलाए ।
प्रभु मोह नाश हो जाए, भव से मुक्ती मिल जाये ॥
जय धर्मनाथ जिन स्वामी, तुम हो प्रभु अन्तर्यामी ।
तव चरण शरण को पाते, प्रभु चरणों शीश झुकाते ॥६॥

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय मोहांधकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

ताजी यह धूप बनाऐं, अग्नी से धूम उड़ाएँ ।
प्रभु कर्म नाश हो जाएँ, भव सागर से तिर जाएँ ॥
जय धर्मनाथ जिन स्वामी, तुम हो प्रभु अन्तर्यामी ।
तव चरण शरण को पाते, प्रभु चरणों शीश झुकाते ॥७॥

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अष्टकर्म दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु विविध सरस फल लाए, ताजे हमने मँगवाए ।
हम मोक्ष महाफल पाएँ, भव सागर से तिर जाएँ ॥

जय धर्मनाथ जिन स्वामी, तुम हो प्रभु अन्तर्यामी ।
तव चरण शरण को पाते, प्रभु चरणों शीश झुकाते ॥८॥

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय प्राप्ताय मोक्षफल फलम् निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु आठों द्रव्य मिलाए, यह पावन अर्घ्य बनाए ।
हम पद अनर्घ पा जाएँ, भव सागर से तिर जाएँ ॥
जय धर्मनाथ जिन स्वामी, तुम हो प्रभु अन्तर्यामी ।
तव चरण शरण को पाते, प्रभु चरणों शीश झुकाते ॥९॥

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अनर्घ पद प्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा– **धर्मनाथ जिन के चरण, देते शांती धार ।**
अष्टकर्म का नाश कर, होवे भवदधि पार ॥

(शान्तये शांतिधारा)

नाथ आप जग में रहे, सुख शांती दातार ।
अतः आपके पद युगल, वंदन बारम्बार ॥

(पुष्पांजलि क्षिपेत्)

पंच कल्याणक के अर्घ्य

(दोहा)

तेरस शुक्ल वैशाख की, मात सुव्रता जान ।
जिनके उर में अवतरे, धर्मनाथ भगवान ॥
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य यह, चढ़ा रहे हम नाथ ।
भक्ती का फल प्राप्त हो, चरण झुकाते माथ ॥१॥

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्ला त्रयोदश्यां गर्भकल्याणक प्राप्ताय श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

माघ सुदी तेरस तिथि, जन्मे धर्म जिनेन्द्र ।
करते हैं अभिषेक सब, सुर-नर-इन्द्र महेन्द्र ॥

अष्ट द्रव्य का अर्घ्य यह, चढ़ा रहे हम नाथ ।
भक्ती का फल प्राप्त हो, चरण झुकाते माथ ॥२॥

ॐ ह्रीं माघशुक्ला त्रयोदश्यां जन्मकल्याणक प्राप्ताय श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(रोला छंद)

तेरस सुदि माघ महान्, प्रभो दीक्षा धारे ।
श्री धर्मनाथ भगवान, बने मुनिवर प्यारे ॥
हम चरणों आए नाथ, अर्घ्य चढ़ाते हैं ।
महिमा तव अपरम्पार, फिर भी गाते हैं ॥३॥

ॐ ह्रीं माघशुक्ला त्रयोदश्यां दीक्षाकल्याणक प्राप्ताय श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(हरिगीता छन्द)

पौष शुक्ला पूर्णिमा को, हुए मंगलकार हैं ।
धर्म जिन तीर्थेश ज्ञानी, कर्म घाते चार हैं ॥
जिन प्रभू की वंदना को, हम शरण में आए हैं ।
अर्घ्य यह प्रासुक बनाकर, हम चढ़ाने लाए हैं ॥४॥

ॐ ह्रीं पौषशुक्ला पूर्णिमायां केवलज्ञानकल्याणक प्राप्ताय श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(शम्भू छन्द)

ज्येष्ठ चतुर्थी शुक्ल पक्ष की, धर्मनाथ जिनवर स्वामी ।
गिरि सम्मेद शिखर से जिनवर, बने मोक्ष के अनुगामी ॥
अष्ट गुणों की सिद्धी पाकर, बने प्रभु अंतर्यामी ।
हमको मुक्तिपथ दर्शाओ, बनो प्रभु मम् पथगामी ॥५॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठशुक्ला चतुर्थ्यां मोक्षकल्याणक प्राप्ताय श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा- **पूजा कर जिनराज की, जीवन हुआ निहाल।**
धर्मनाथ भगवान की, गातें अब जयमाल॥

(तर्ज–भक्ति बेकरार है)

धर्मनाथ भगवान हैं, गुण अनन्त की खान हैं ।
दिव्य देशना देकर प्रभु जी, करते जग कल्याण हैं ॥
सर्वार्थ-सिद्धी से चय करके, रत्नपुरी में आये जी ।
मात सुव्रता भानू नृप के, गृह में मंगल छाये जी ॥
धर्मनाथ भगवान...

रत्नपुरी में देवों ने कई, रत्न श्रेष्ठ वर्षाए जी ।
दिव्य सर्व सामग्री लाकर, नगरी खूब सजाए जी ॥
धर्मनाथ भगवान...

चौथ शुक्ल की ज्येष्ठ माह में, सारे कर्म नशाए जी ।
यह संसार असार छोड़कर, शिवपुर पदवी पाए जी ॥
धर्मनाथ भगवान...

हम भी शिव पद पाने की शुभ, विशद भावना भाते जी ।
तीन योग से प्रभु चरणों में, सादर शीश झुकाते जी ॥
धर्मनाथ भगवान...

त्रयोदशी शुभ माघ शुक्ल की, जन्मोत्सव प्रभु पायाजी ।
पाण्डुक वन में इन्द्रों द्वारा, शुभ अभिषेक कराया जी ॥
धर्मनाथ भगवान...

वज्र दण्ड लख दांये पग में, नामकरण शुभ इन्द्र किया ।
धर्म ध्वजा के धारी अनुपम, धर्मनाथ शुभ नाम दिया ॥
धर्मनाथ भगवान...

अष्ट वर्ष की उम्र प्राप्त कर, देशव्रतों को धारा जी ।
युवा अवस्था में राजा पद, प्रभु ने श्रेष्ठ सम्हारा जी ॥
धर्मनाथ भगवान...

त्रयोदशी को माघ शुक्ल की, संयम पथ अपनाया जी ।
पंच मुष्ठि से केश लुंचकर, रत्नत्रय शुभ पाया जी ॥
धर्मनाथ भगवान...

उभय परिग्रह त्याग प्रभु ने, आतम ध्यान लगाया जी ।
धर्म ध्यान कर शुक्ल ध्यान का, अनुपम शुभ फल पाया जी ॥
धर्मनाथ भगवान...

चार घातिया कर्मनाश कर, केवल ज्ञान जगाया जी ।
रत्नमयी शुभ समवशरण तब, इन्द्रों ने बनवाया जी ॥
धर्मनाथ भगवान...

गंध कुटी में कमलासन पर, प्रभु ने आसन पाया जी ।
दिव्य देशना देकर प्रभु ने, सब का मन हर्षाया जी ॥
धर्मनाथ भगवान...

दोहा– धर्मनाथ जी धर्म का, हमें दिखाओ पंथ ।
रत्नत्रय को प्राप्त कर, होय कर्म का अंत ॥

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अनर्घपद प्राप्ताय जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा– रत्नत्रय की नाव से, पार करें संसार ।
'विशद' भावना बस यही, पावें भव से पार ॥

॥ इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिं क्षिपेत् ॥

प्रथम वलय

दोहा– पर्याप्ति के भेद छह, पाकर के भगवान ।
संयम का पालन करें, पावें पद निर्वाण ।

(प्रथम वलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

स्थापना (वीर छन्द)

हे धर्मनाथ! हे धर्मतीर्थ!, तुम धर्म ध्वजा को फहराओ ।
तुम मोक्ष मार्ग के नेता हो, प्रभु राह दिखाने को आओ ॥
तुमने मुक्ति पद वरण किया, तव चरणों हम करते अर्चन ।
मम हृदय कमल के बीच कर्णिका, में आकर तिष्ठो भगवन् ॥
भक्तों ने भाव सहित भगवन्, भक्ती के हेतु पुकारा है ।
न देर करो उर में आओ, यह तो अधिकार हमारा है ॥

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथ जिनेन्द्र! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथ जिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथ जिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितौ भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

पर्याप्ति धारक जिन के अर्घ्य

(चौबोला छन्द)

पर्याप्ती 'आहार' योग्य शुभ, हो शक्ती का पूर्ण विकास ।
ग्रहण वर्गणाए करता है, जीव स्वयं ही करे प्रयास ॥
छह पर्याप्ती पाकर जिनवर, करते हैं नित आतम ध्यान ।
आत्म साधना करने वाले, पा जाते हैं पद निर्वाण ॥१॥

ॐ ह्रीं आहार पर्याप्ति धारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जो 'शरीर' के योग्य शक्ति की, करें पूर्णता जीव प्रधान ।
वे शरीर पर्याप्तीधारी, तन की रचना करें महान ॥
छह पर्याप्ती पाकर जिनवर, करते हैं नित आतम ध्यान ।
आत्म साधना करने वाले, पा जाते हैं पद निर्वाण ॥२॥

ॐ ह्रीं शरीर पर्याप्ति धारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जो 'इन्द्रिय' पर्याप्ति हेतु शुभ, शक्ति पूर्णता करें विशेष ।
वे इन्द्रिय पर्याप्ती पाकर, इन्द्रिय सुख पावें अवशेष ॥
छह पर्याप्ती पाकर जिनवर, करते हैं नित आतम ध्यान ।
आत्म साधना करने वाले, पा जाते हैं पद निर्वाण ॥३॥

ॐ ह्रीं इन्द्रिय पर्याप्ति धारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

'श्वासोच्छवास' पर्याप्ती की जो, करें पूर्णता जीव महान ।
वह पर्याप्त जीव होकर के, जीवन में करते कल्याण ॥
छह पर्याप्ती पाकर जिनवर, करते हैं नित आतम ध्यान ।
आत्म साधना करने वाले, पा जाते हैं पद निर्वाण ॥४॥

ॐ ह्रीं श्वासोच्छवास पर्याप्ति धारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जो 'भाषा' के योग्य शक्ति की, करें पूर्णता जीव सदैव ।
वह भाषा पर्याप्ती पाकर, वचन बोलते प्राणी एव ॥
छह पर्याप्ती पाकर जिनवर, करते हैं नित आतम ध्यान ।
आत्म साधना करने वाले, पा जाते हैं पद निर्वाण ॥५॥

ॐ ह्रीं भाषा पर्याप्ति धारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

'मन' पर्याप्ती योग्य शक्ति की, करें पूर्णता जीव प्रधान ।
पंचेन्द्रिय संज्ञी प्राणी हो, करते हैं निज का कल्याण ॥
छह पर्याप्ती पाकर जिनवर, करते हैं नित आतम ध्यान ।
आत्म साधना करने वाले, पा जाते हैं पद निर्वाण ॥६॥

ॐ ह्रीं मन पर्याप्ति धारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

आहारादि छह पर्याप्ति के, योग्य पूर्णता करें महान ।
उत्तम संयम पालन करके, उन जीवों का हो कल्याण ॥
छह पर्याप्ती पाकर जिनवर, करते हैं नित आतम ध्यान ।
आत्म साधना करने वाले, पा जाते हैं पद निर्वाण ॥७॥

ॐ ह्रीं छह पर्याप्ति धारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

द्वितीय वलयः

दोहा– **द्वादश अविरति त्याग कर, हो जाएँ व्रतवान ।**
संयम के धारी कहे, इस जग में गुणवान ॥

(द्वितिय वलयोपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

स्थापना (वीर छन्द)

हे धर्मनाथ! हे धर्मतीर्थ!, तुम धर्म ध्वजा को फहराओ ।
तुम मोक्ष मार्ग के नेता हो, प्रभु राह दिखाने को आओ ॥
तुमने मुक्ति पद वरण किया, तव चरणों हम करते अर्चन ।
मम हृदय कमल के बीच कर्णिका, में आकर तिष्ठो भगवन् ॥
भक्तों ने भाव सहित भगवन्, भक्ती के हेतु पुकारा है ।
न देर करो उर में आओ, यह तो अधिकार हमारा है ॥

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथ जिनेन्द्र! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथ जिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथ जिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितौ भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

बारह अविरति रहित जिन

(शम्भू छन्द)

है शरीर 'पृथ्वी' जिनका, वह पृथ्वी जीव कहाते हैं।
होके विकल रहें एकेन्द्रिय, जीवन भर दुख पाते हैं॥
जीवों पर करुणा ना करते, होते अव्रत के धारी।
शिवपुर के राही बनते जिन, हिंसा तज मंगलकारी॥१॥

ॐ ह्रीं पृथ्वीकायिक अविरति विनाशक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

'जल' ही है शरीर जिनका वह, जल कायिक कहलाते जीव ।
मारण तापन छेदन भेदन, आदी के दुख सहें अतीव ॥

जीवों पर करुणा ना करते, होते अव्रत के धारी ।
शिवपुर के राही बनते जिन, हिंसा तज मंगलकारी ॥२॥

ॐ ह्रीं जलकायिक अविरति विनाशक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

'अग्नी' में रहने वाले सब, जीव उष्णता जो पाते ।
जलकर स्वयं जलाने वाले, कष्ट स्वयं सहते जाते ॥
जीवों पर करुणा ना करते, होते अव्रत के धारी ।
शिवपुर के राही बनते जिन, हिंसा तज मंगलकारी ॥३॥

ॐ ह्रीं अग्निकायिक अविरति विनाशक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

'वायू' जिनका है शरीर वह, वायू कायिक जीव कहे ।
गर्जन तर्जन आदि के दुख, से व्याकुल वह नित्य रहे ॥
जीवों पर करुणा ना करते, होते अव्रत के धारी ।
शिवपुर के राही बनते जिन, हिंसा तज मंगलकारी ॥४॥

ॐ ह्रीं वायुकायिक अविरति विनाशक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

'वनस्पती' में रहने वाले, एकेन्द्रिय हैं जीव अपार ।
वनस्पती कायिक कहलाते, जिनके दुख का नहीं है पार ॥
जीवों पर करुणा ना करते, होते अव्रत के धारी ।
शिवपुर के राही बनते जिन, हिंसा तज मंगलकारी ॥५॥

ॐ ह्रीं वनस्पति कायिक अविरति विनाशक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

'दो इन्द्रिय' से पंचेन्द्रिय तक, जंगम होते हैं त्रस जीव ।
कर्मोदय से छेदन भेदन, के दुख पाते स्वयं अतीव ॥
जीवों पर करुणा ना करते, होते अव्रत के धारी ।
शिवपुर के राही बनते जिन, हिंसा तज मंगलकारी ॥६॥

ॐ ह्रीं त्रस जीवाविरति विनाशक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

'स्पर्शन इन्द्रिय' के भाई, आठ भेद बतलाए हैं ।
जिसकी आशक्ती के कारण, जीव जगत भटकाए हैं ॥

जीवों पर करुणा ना करते, होते अव्रत के धारी ।
शिवपुर के राही बनते हैं, अविरत तज मंगलकारी ॥७॥

ॐ ह्रीं स्पर्शन इन्द्रियाविरति विनाशक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

पाँच भेद 'रसना इन्द्रिय' के, जीव रहें उसमें आसक्त ।
लीन रहें खाने पीने में, रात होय या दिन हर वक्त ॥
जीवों पर करुणा ना करते, होते अव्रत के धारी ।
शिवपुर के राही बनते हैं अविरत तज मंगलकारी ॥८॥

ॐ ह्रीं रसना इन्द्रियाविरति विनाशक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

'घ्राणेन्द्रिय' के विषय कहे दो, एक सुगन्ध और दुर्गन्ध ।
मधुकर सम आसक्त हुए नर, विषयों में होकर के अंध ॥
जीवों पर करुणा ना करते, होते अव्रत के धारी ।
शिवपुर के राही बनते हैं अविरत तज मंगलकारी ॥९॥

ॐ ह्रीं घ्राणेन्द्रिय अविरति विनाशक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

'चक्षू इन्द्रिय' की आशक्ती, रखते हैं जो जग के जीव ।
मोहित हो इन्द्रिय विषयों में, कर्मबन्ध जो करें अतीव ॥
जीवों पर करुणा ना करते, होते अव्रत के धारी ।
शिवपुर के राही बनते हैं अविरत तज मंगलकारी ॥१०॥

ॐ ह्रीं चक्षु इन्द्रिय कायिकाविरति विनाशक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

'कर्णेन्द्रिय' के भेद सात हैं, उनमें आशक्ती को धार ।
दु:ख उठाते हैं भव-भव में, प्राणी जग के बारम्बार ॥
जीवों पर करुणा ना करते, होते अव्रत के धारी ।
शिवपुर के राही बनते हैं, अविरत तज मंगलकारी ॥११॥

ॐ ह्रीं कर्णेन्द्रियाविरति विनाशक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

कभी हिताहित का विवेक जो, जाग्रत न कर पाते हैं ।
इन्द्रिय 'मन' की आशक्ती से, दु:ख अनेक उठाते हैं ॥

जीवों पर करुणा ना करते, होते अव्रत के धारी ।
शिवपुर के राही बनते हैं, अविरत तज मंगलकारी ॥१२॥

ॐ ह्रीं अनिन्द्रयाविरति विनाशक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

इन्द्रिय प्राणी संयम पाकर, उत्तम व्रत जो धार रहे ।
रत्नत्रय की निधि के स्वामी, शिव के राही जीव कहे ॥
जीवों पर करुणा ना करते, होते अव्रत के धारी ।
शिवपुर के राही बनते हैं, अविरत तज मंगलकारी ॥१३॥

ॐ ह्रीं इन्द्रिय संयमाविरति विनाशक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

तृतीय वलयः

सोरठा– **भेद कहे चौबीस, परिग्रह के दुखकाराये ।**
चरण झुकाते शीश, धर्मनाथ जिन के चरण ॥

(तृतिय वलयोपरि पुष्पांजलि क्षिपेत्)

स्थापना (वीर छन्द)

हे धर्मनाथ! हे धर्मतीर्थ!, तुम धर्म ध्वजा को फहराओ ।
तुम मोक्ष मार्ग के नेता हो, प्रभु राह दिखाने को आओ ॥
तुमने मुक्ति पद वरण किया, तव चरणों हम करते अर्चन ।
मम हृदय कमल के बीच कर्णिका, में आकर तिष्ठो भगवन् ॥
भक्तों ने भाव सहित भगवन्, भक्ती के हेतु पुकारा है ।
न देर करो उर में आओ, यह तो अधिकार हमारा है ॥

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथ जिनेन्द्र! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथ जिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथ जिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितौ भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

२४ परिग्रह रहित जिन के अर्घ्य

(चौपाई)

जो 'मिथ्या' भाव जगावें, वे सत् श्रद्धा न पावें ।
जो हैं मिथ्यात्व के धारी, वह दुख पाते हैं भारी ॥१॥

ॐ ह्रीं मिथ्या परिग्रह रहित श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जो हैं 'कषाय' जयकारी, इस जग में मंगलकारी ।
हैं 'क्रोध कषाय' के धारी, वह दुख पाते हैं भारी ॥२॥

ॐ ह्रीं क्रोध कषाय परिग्रह रहित श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जो 'मान' करें जग प्राणी, वह स्वयं उठाते हानी ।
हैं मान कषाय के धारी, वह दुख पाते हैं भारी ॥३॥

ॐ ह्रीं मान परिग्रह रहित श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जो करते 'मायाचारी', दुख सहते वह नर नारी ।
हैं माया कषाय के धारी, वह दुख पाते हैं भारी ॥४॥

ॐ ह्रीं माया परिग्रह रहित श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जग के सब 'लोभी' प्राणी, मानो पापों की खानी ।
हैं लोभ कषाय के धारी, वह दुख पाते हैं भारी ॥५॥

ॐ ह्रीं लोभ परिग्रह रहित श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

(तांटक छन्द)

'हास्य' कषाय करें जो प्राणी, वह दुःखों को पाते हैं ।
शंकित होते हैं औरों से, निज संसार बढ़ाते हैं ॥
इस कषाय के नाशी प्राणी, तीर्थंकर पद पाते हैं ।
उनके चरणों जग के सारे, प्राणी शीश झुकाते हैं ॥६॥

ॐ ह्रीं हास्य नो कषाय परिग्रह रहित श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

'रति' उदय में जिनके आवे, वे सब राग बढ़ाते हैं ।
राग आग में जलकर प्राणी, दुर्गति पंथ सजाते हैं ॥

इस कषाय के नाशी प्राणी, तीर्थंकर पद पाते हैं ।
उनके चरणों जग के सारे, प्राणी शीश झुकाते हैं ॥७॥

ॐ ह्रीं रति नो कषाय परिग्रह रहित श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

'अरति' भाव मन में आने से, अप्रीति का भाव जगे ।
बैर भाव के कारण मानव, कर्माश्रव में शीघ्र लगे ॥
इस कषाय के नाशी प्राणी, तीर्थंकर पद पाते हैं ।
उनके चरणों जग के सारे, प्राणी शीश झुकाते हैं ॥८॥

ॐ ह्रीं अरति नो कषाय परिग्रह रहित श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

कुछ भी इष्टानिष्ट देखकर, मन में 'शोक' जगाते हैं ।
नित कषाय में जलने वाले, कर्म बन्ध ही पाते हैं ॥
इस कषाय के नाशी प्राणी, तीर्थंकर पद पाते हैं ।
उनके चरणों जग के सारे, प्राणी शीश झुकाते हैं॥९॥

ॐ ह्रीं शोक नो कषाय परिग्रह रहित श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

देख कोई भयकारी वस्तू, मन में भय उपजाते हैं ।
भय के कारण व्याकुल होकर, शांत नहीं रह पाते हैं ॥
इस कषाय के नाशी प्राणी, तीर्थंकर पद पाते हैं ।
उनके चरणों जग के सारे, प्राणी शीश झुकाते हैं ॥१०॥

ॐ ह्रीं भय नो कषाय परिग्रह रहित श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

स्व-पर के गुण दोष देखकर, जो ग्लानी उपजाते हैं ।
रहे कषाय 'जुगुप्सा' धारी, दुर्गति में ही जाते हैं ॥
इस कषाय के नाशी प्राणी, तीर्थंकर पद पाते हैं ।
उनके चरणों जग के सारे, प्राणी शीश झुकाते हैं ॥११॥

ॐ ह्रीं जुगुप्सा नो कषाय परिग्रह रहित श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

पुरुष जन्य जो भाव प्राप्त कर, रमने को खोजें नारी ।
'पुरुष वेद' के धारी हैं वह, व्याकुल रहते हैं भारी ॥

इस कषाय के नाशी प्राणी, तीर्थंकर पद पाते हैं ।
उनके चरणों जग के सारे, प्राणी शीश झुकाते हैं ॥१२॥

ॐ ह्रीं पुरुष वेद कषाय परिग्रह रहित श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

स्त्री जन्य भाव पाकर के, पुरुषों में जो रमण करें ।
'स्त्री वेद' प्राप्त करके वह, दुर्गति में ही गमन करें ॥
इस कषाय के नाशी प्राणी, तीर्थंकर पद पाते हैं ।
उनके चरणों जग के सारे, प्राणी शीश झुकाते हैं ॥१३॥

ॐ ह्रीं स्त्री वेद कषाय परिग्रह रहित श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

मन में नर नारी की आशा, रखते हैं वह 'षण्ड' कहे ।
करते हैं उत्पात विषय गत, भारी जो उद्दण्ड रहे ॥
इस कषाय के नाशी प्राणी, तीर्थंकर पद पाते हैं ।
उनके चरणों जग के सारे, प्राणी शीश झुकाते हैं ॥८॥

ॐ ह्रीं नपुंसक वेद कषाय परिग्रह रहित श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

(छन्द भुजंगप्रयात)

खेती के मन में जो भाव जगाए, 'क्षेत्र परिग्रह' के धारी कहाए ।
बहिरंग तजकर परिग्रह ये भाई, जिनवर ने मुक्ती श्री श्रेष्ठ पाई ॥१५॥

ॐ ह्रीं क्षेत्र परिग्रह रहित श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

कोठी महल बंगला जो बनावें, 'वास्तु परिग्रह' के धारी कहावें।
बहिरंग तजकर परिग्रह ये भाई, जिनवर ने मुक्ती श्री श्रेष्ठ पाई॥१६॥

ॐ ह्रीं वास्तु परिग्रह रहित श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

चाँदी की मन में जो आशा जगावें, 'परिग्रह हिरण्य' के धारी कहावें ।
बहिरंग तजकर परिग्रह ये भाई, जिनवर ने मुक्ती श्री श्रेष्ठ पाई ॥१७॥

ॐ ह्रीं हिरण्य कषाय परिग्रह रहित श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

सोने के आभूषण आदी मंगावें, 'परिग्रह जो स्वर्ण' के धारी कहावें ।
बहिरंग तजकर परिग्रह ये भाई, जिनवर ने मुक्ती श्री श्रेष्ठ पाई ॥१८॥

ॐ ह्रीं स्वर्ण परिग्रह रहित श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

पशुओं के पालन में मन को लगावें, वह 'धन परिग्रह' के धारी कहावें ।
बहिरंग तजकर परिग्रह ये भाई, जिनवर ने मुक्ती श्री श्रेष्ठ पाई ॥१९॥
ॐ ह्रीं धन परिग्रह रहित श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।
लेकर के धान्य जो कोठे भरावें, वह 'धान्य परिग्रह' के धारी कहावें ।
बहिरंग तजकर परिग्रह ये भाई, जिनवर ने मुक्ती श्री श्रेष्ठ पाई ॥२०॥
ॐ ह्रीं धान्य परिग्रह रहित श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।
सेवा के हेतु जो नौकर बुलावें, वह 'दास परिग्रह' के धारी कहावें ।
बहिरंग तजकर परिग्रह ये भाई, जिनवर ने मुक्ति श्री श्रेष्ठ पाई ॥२१॥
ॐ ह्रीं दास परिग्रह रहित श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।
स्त्री से अपनी जो सेवा करावें, वे 'दासी परिग्रह' के धारी कहावें ।
बहिरंग तजकर परिग्रह ये भाई, जिनवर ने मुक्ती श्री श्रेष्ठ पाई ॥२२॥
ॐ ह्रीं दासी परिग्रह रहित श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।
कपड़े जो नये-नये कइ लेकर के आवें, वे 'कुप्य परिग्रह' के धारी कहावें।
बहिरंग तजकर परिग्रह ये भाई, जिनवर ने मुक्ती श्री श्रेष्ठ पाई॥२३॥
ॐ ह्रीं कुप्य परिग्रह रहित श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।
भाड़े या बर्तन से कोठे भरावें, वह 'भाण्ड परिग्रह' के धारी कहावें ।
बहिरंग तजकर परिग्रह ये भाई, जिनवर ने मुक्ती श्री श्रेष्ठ पाई ॥२४॥
ॐ ह्रीं भाण्ड परिग्रह रहित श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

दोहा– परिग्रह चौबिस का प्रभू, तजके मन से आस
शिवपथ के राही बने, कीन्हे शिवपुर वास॥
ॐ ह्रीं चतुर्विंशति परिग्रह रहित श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

चतुर्थ वलयः

दोहा– छियालिस पाए मूलगुण, धर्मनाथ भगवान।
पुष्पांजलि करके यहाँ, करते हम गुणगान॥
(चतुर्थ वलयोपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

स्थापना (वीर छन्द)

हे धर्मनाथ! हे धर्मतीर्थ!, तुम धर्म ध्वजा को फहराओ ।
तुम मोक्ष मार्ग के नेता हो, प्रभु राह दिखाने को आओ ॥
तुमने मुक्ति पद वरण किया, तव चरणों हम करते अर्चन ।
मम हृदय कमल के बीच कर्णिका, में आकर तिष्ठो भगवन् ॥
भक्तों ने भाव सहित भगवन्, भक्ती के हेतु पुकारा है ।
न देर करो उर में आओ, यह तो अधिकार हमारा है ॥
ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथ जिनेन्द्र! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथ जिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथ जिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितौ भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

जन्म के अतिशय

(नरेन्द्र छन्द)

'स्वेद रहित' तन जानो अनुपम, जन-जन का मन मोहे ।
प्रभु के जन्म समय से अतिशय, शुभ तन में यह सोहे ।
सुर नर असुर इन्द्र विद्याधर, जिन प्रभु के गुण गावें ।
भक्ति भाव से जो भी पूजें, वह अनुपम सुख पावें॥१॥
ॐ ह्रीं स्वेद रहित सहजातिशयधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।
गर्भ से जन्मे हैं माता के, फिर भी निर्मल गाये ।
'मल मूत्रादिक रहित' देह प्रभु, अतिशय पावन पाये ॥
सुर नर असुर इन्द्र विद्याधर, जिन प्रभु के गुण गावें ।
भक्ति भाव से जो भी पूजें, वह अनुपम सुख पावें ॥२॥
ॐ ह्रीं निहार मूत्रादि रहित सहजातिशयधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।
तन का 'रुधिर श्वेत' है अनुपम, अतिशय पावन गाया ।
रुधिर लाल नहि यह शुभ अतिशय, जन्म समय का पाया ॥

सुर नर असुर इन्द्र विद्याधर, जिन प्रभु के गुण गावें ।
भक्ति भाव से जो भी पूजें, वह अनुपम सुख पावें ॥३॥

ॐ ह्रीं श्वेत रक्त सहजातिशयधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

तन सुडोल आकार मनोहर, 'सम चतुष्क' बतलाया ।
जिस अवयव का माप है जितना, उतना ही मन भाया ॥
सुर नर असुर इन्द्र विद्याधर, जिन प्रभु के गुण गावें ।
भक्ति भाव से जो भी पूजें, वह अनुपम सुख पावें ॥४॥

ॐ ह्रीं सम चतुष्क संस्थान सहजातिशयधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

'वज्र वृषभ नाराच' संहनन, जिनवर तन में पाते ।
गणधरादि नित हर्षित मन से, प्रभु का ध्यान लगाते ॥
सुर नर असुर इन्द्र विद्याधर, जिन प्रभु के गुण गावें ।
भक्ति भाव से जो भी पूजें, वह अनुपम सुख पावें ॥५॥

ॐ ह्रीं वज्रवृषभनाराच संहनन सहजातिशयधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

कामदेव का रूप लजावे, जिन प्रभु तन के आगे ।
'अतिशय रूप' मनोहर प्रभु का, देखत में शुभ लागे ॥
सुर नर असुर इन्द्र विद्याधर, जिन प्रभु के गुण गावें ।
भक्ति भाव से जो भी पूजें, वह अनुपम सुख पावें ॥६॥

ॐ ह्रीं अतिशय रूप सहजातिशयधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

परम 'सुगंधित तन' है प्रभु का, अनुपम महिमाकारी ।
अन्य सुरभि नहिं है इस जग में, प्रभु तन सम मनहारी ॥
सुर नर असुर इन्द्र विद्याधर, जिन प्रभु के गुण गावें ।
भक्ति भाव से जो भी पूजें, वह अनुपम सुख पावें ॥७॥

ॐ ह्रीं परम सुगंधित तन सहजातिशयधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

'एक हजार आठ शुभ लक्षण', प्रभु के तन में सोहे ।
अद्भुत महिमाशाली जिनवर, त्रिभुवन का मन मोहे ॥

सुर नर असुर इन्द्र विद्याधर, जिन प्रभु के गुण गावें ।
भक्ति भाव से जो भी पूजें, वह अनुपम सुख पावें ॥८॥

ॐ ह्रीं सहस्राष्ट शुभ लक्षण सहजातिशयधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.स्वाहा।

तुलना रहित 'अतुल बल' प्रभु के, अतिशय तन में गाया ।
इन्द्र चक्रवर्ती से अद्भुत, शक्ती मय बतलाया ॥
सुर नर असुर इन्द्र विद्याधर, जिन प्रभु के गुण गावें ।
भक्ति भाव से जो भी पूजें, वह अनुपम सुख पावें ॥९॥

ॐ ह्रीं अतुल्य बल सहजातिशयधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

'हित मितप्रिय वचन' अमृत सम, प्रभु के होते भाई ।
त्रिभुवन के प्राणी सुनते हों, मंत्र मुग्ध सुखदायी ॥
सुर नर असुर इन्द्र विद्याधर, जिन प्रभु के गुण गावें ।
भक्ति भाव से जो भी पूजें, वह अनुपम सुख पावें ॥१०॥

ॐ ह्रीं प्रियहित वचन सहजातिशयधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

केवलज्ञान के अतिशय

(रोला छन्द)

'चार-चार सौ कोष', चारों दिश में गाया ।
होय सुभिक्ष सुकाल, यह अतिशय प्रभु पाया ॥
यह अतिशय हे नाथ! जन-जन के मन आवे ।
तव चरणाम्बुज ध्याय, प्राणी शिव सुख पावे ॥११॥

ॐ ह्रीं गव्यूति शत् चतुष्टय सुभिक्षत्व घातिक्षयधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

पाते केवल ज्ञान, 'नभ में गमन' करे हैं ।
देव रचावें पुष्प, तिन पर चरण धरे हैं ॥
यह अतिशय हे नाथ! जन-जन के मन आवे ।
तव चरणाम्बुज ध्याय, प्राणी शिव सुख पावे ॥१२॥

ॐ ह्रीं आकाश गमन घातिक्षयधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जहाँ गमन प्रभु होय, प्राणी 'वध न' होवे ।
दया सिन्धु जिन देव, जग की जड़ता खोवे ॥
यह अतिशय हे नाथ! जन-जन के मन आवे ।
तव चरणाम्बुज ध्याय, प्राणी शिव सुख पावे ॥१३॥

ॐ ह्रीं अदयाभाव घातिक्षयधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

'कवलाहार विहीन' रहते, हैं जिन स्वामी ।
कुछ कम कोटिक पूर्व, रहें जिन अन्तर्यामी ॥
यह अतिशय हे नाथ! जन-जन के मन आवे ।
तव चरणाम्बुज ध्याय, प्राणी शिव सुख पावे ॥१४॥

ॐ ह्रीं कवलाहार रहित घातिक्षयधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

हो 'उपसर्गाभाव', अतिशय यह शुभकारी ।
सुर नर पशू अजीव कृत उपसर्ग निवारी ॥
यह अतिशय हे नाथ! जन-जन के मन आवे ।
तव चरणाम्बुज ध्याय, प्राणी शिव सुख पावे ॥१५॥

ॐ ह्रीं उपसर्गाभाव घातिक्षयधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

समवशरण में देव, 'चउ दिश दर्शन' देवें ।
मुख पूरब में होय सबका, दुख हर लेवें ॥
यह अतिशय हे नाथ! जन-जन के मन आवे ।
तव चरणाम्बुज ध्याय, प्राणी शिव सुख पावे ॥१६॥

ॐ ह्रीं चतुर्मुखत्व घातिक्षयधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

'सब विद्या के एक, ईश्वर' आप कहाए ।
तुम्हें पूजते भव्य, ज्ञान कला प्रगटाए ॥
यह अतिशय हे नाथ! जन-जन के मन आवे ।
तव चरणाम्बुज ध्याय, प्राणी शिव सुख पावे ॥१७॥

ॐ ह्रीं सर्व विद्येश्वर घातिक्षयधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

परमौदारिक देह पुद्गलमय, प्रभु पाए ।
फिर भी 'छाया हीन' अतिशय, यह प्रगटाए ॥
यह अतिशय हे नाथ! जन-जन के मन आवे ।
तव चरणाम्बुज ध्याय, प्राणी शिव सुख पावे ॥१८॥

ॐ ह्रीं छाया रहित अतिशय घातिक्षयधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

'पलक झपकती नाहिं,' न ही हो टिमकारी ।
सौम्य दृष्टि नाशाग्र, लगती अतिशय प्यारी ॥
'यह अतिशय हे नाथ!' जन-जन के मन आवे ।
तव चरणाम्बुज ध्याय, प्राणी शिव सुख पावे ॥१९॥

ॐ ह्रीं अक्ष स्पंद रहित घातिक्षयधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

नहीं बढ़ें नख केश, केवल ज्ञानी होते ।
दिव्य शरीर विशेष, मन का कल्मष खोते ॥
यह अतिशय हे नाथ! जन-जन के मन आवे ।
तव चरणाम्बुज ध्याय, प्राणी शिव सुख पावे ॥२०॥

ॐ ह्रीं समान नख केशत्व घातिक्षयधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

१४ देववृत अतिशय

(छन्द जोगीरासा)

भाषा है 'सर्वार्धमागधी', जिन अतिशय शुभकारी ।
भव-भव के दुख हरने वाली, भव्यों को सुखकारी ॥
अर्घ्य चढ़ाकर भक्ति भाव से, श्री जिन के गुण गाएँ ।
अतिशय पुण्य बढ़ाके हम भी, रत्नत्रय निधि पाएँ ॥२१॥

ॐ ह्रीं अर्धमागधी भाषाधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

बैर भाव सब तज देते हैं, जाति विरोधी प्राणी ।
'मैत्री भाव' बढ़े आपस में, जिन मुद्रा कल्याणी ॥

अर्घ्य चढ़ाकर भक्ति भाव से, श्री जिन के गुण गाएँ ।
अतिशय पुण्य बढ़ाके हम भी, रत्नत्रय निधि पाएँ ॥२२॥

ॐ ह्रीं सर्व मैत्री भावधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

'सब ऋतु के फल फूल' खिलें शुभ, एक साथ मनहारी ।
कई योजन तक होवे ऐसा, अतिशय अद्‌भुत भारी ॥
अर्घ्य चढ़ाकर भक्ति भाव से, श्री जिन के गुण गाएँ ।
अतिशय पुण्य बढ़ाके हम भी, रत्नत्रय निधि पाएँ ॥२३॥

ॐ ह्रीं सर्वऋतुफलादि तरू देपोपनीतातिशयधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

रत्नमयी पृथ्वी 'दर्पण तल सम', होवे अतिशयकारी ।
प्रभु के विहरण हेतू रचना, करें देवगण सारी ॥
अर्घ्य चढ़ाकर भक्ति भाव से, श्री जिन के गुण गाएँ ।
अतिशय पुण्य बढ़ाके हम भी, रत्नत्रय निधि पाएँ ॥२४॥

ॐ ह्रीं आदर्श तल प्रतिमा रत्नमई देवोपनीतातिशयधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

वायुकुमार देव विक्रिया कर, 'शीतल पवन' चलावें ।
हो अनुकूल वायु विहार में, ये अतिशय प्रगटावें ॥
अर्घ्य चढ़ाकर भक्ति भाव से, श्री जिन के गुण गाएँ ।
अतिशय पुण्य बढ़ाके हम भी, रत्नत्रय निधि पाएँ ॥२५॥

ॐ ह्रीं सुगंधित विहरण मनुगत वायुत्व श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

परमानन्द प्राप्त कर प्राणी, जिन प्रभु के गुण गाते ।
भय संकट क्लेशादि रोग सब, मन में नहीं सताते ॥
अर्घ्य चढ़ाकर भक्ति भाव से, श्री जिन के गुण गाएँ ।
अतिशय पुण्य बढ़ाके हम भी, रत्नत्रय निधि पाएँ ॥२६॥

ॐ ह्रीं सर्वानंदकारक देवोपनीतातिशयधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

सुखद वायु चलने से 'धूली, कंटक न' रह पावें ।
प्रभु विहार के समय देवगण, भूमी स्वच्छ बनावे ॥
अर्घ्य चढ़ाकर भक्ति भाव से, श्री जिन के गुण गाएँ ।
अतिशय पुण्य बढ़ाके हम भी, रत्नत्रय निधि पाएँ ॥२७॥

ॐ ह्रीं वायुकुमारोपशमित धूलि कंटकादि देवोपनीतातिशयधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

मेघ कुमार करें नित वृष्टी, गंधोदक की भाई ।
इन्द्रराज की आज्ञा से हो, यह प्रभु की प्रभुताई ॥
अर्घ्य चढ़ाकर भक्ति भाव से, श्री जिन के गुण गाएँ ।
अतिशय पुण्य बढ़ाके हम भी, रत्नत्रय निधि पाएँ ॥२८॥

ॐ ह्रीं मेघकुमार वृत गंधोदक वृष्टि देवोपनीतातिशयधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

'स्वर्ण कमल' की रचना सुरगण, श्री विहार में करते ।
चरण कमल में नत मस्तक हो, अपना मस्तक धरते ॥
अर्घ्य चढ़ाकर भक्ति भाव से, श्री जिन के गुण गाएँ ।
अतिशय पुण्य बढ़ाके हम भी, रत्नत्रय निधि पाएँ ॥२९॥

ॐ ह्रीं चरण कमल तल रचित स्वर्ण कमल देवोपनीतातिशयधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

अष्ट द्रव्य मंगल मय पावन, सुरगण जहाँ सजाते ।
देवों कृत अतिशय यह सुन्दर, सबको सुखी बनाते ॥
अर्घ्य चढ़ाकर भक्ति भाव से, श्री जिन के गुण गाएँ ।
अतिशय पुण्य बढ़ाके हम भी, रत्नत्रय निधि पाएँ ॥३०॥

ॐ ह्रीं अष्ट मंगल द्रव्य देवोपनीतातिशयधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

शरद ऋतू सम स्वच्छ सुनिर्मल, गगन होय मनहारी ।
उल्कापात धूम्र आदिक से, रहित होय शुभकारी ॥

अर्घ्य चढ़ाकर भक्ति भाव से, श्री जिन के गुण गाएँ ।
अतिशय पुण्य बढ़ाके हम भी, रत्नत्रय निधि पाएँ ॥३१॥

ॐ ह्रीं शरदकाल वन्निर्मल गगन देवोपनीतिशयधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

शरद मेघ सम सर्व दिशाएँ, होवें जन मनहारी ।
रोगादि पीड़ाएँ हरते, देव सभी की सारी ॥
अर्घ्य चढ़ाकर भक्ति भाव से, श्री जिन के गुण गाएँ ।
अतिशय पुण्य बढ़ाके हम भी, रत्नत्रय निधि पाएँ ॥३२॥

ॐ ह्रीं आकाश गमन देवोपनीतातिशयधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

चतुर्निकाय के देव शीघ्र ही, प्रभु भक्ति को आओ ।
इन्द्राज्ञा से देव बुलाते, आकर प्रभु गुण गाओ ॥
अर्घ्य चढ़ाकर भक्ति भाव से, श्री जिन के गुण गाएँ ।
अतिशय पुण्य बढ़ाके हम भी, रत्नत्रय निधि पाएँ ॥३३॥

ॐ ह्रीं आकाशे जय-जयकार देवोपनीतातिशयधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

'धर्म चक्र' ले यक्ष इन्द्र शुभ, आगे आगे जावें ।
चार दिशा में दिव्य चक्र ले, मानो प्रभु गुण गावें ॥
अर्घ्य चढ़ाकर भक्ति भाव से, श्री जिन के गुण गाएँ ।
अतिशय पुण्य बढ़ाके हम भी, रत्नत्रय निधि पाएँ ॥३४॥

ॐ ह्रीं धर्मचक्र चतुष्टय देवोपनीतातिशयधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

अनन्त चतुष्टय

(चाल छन्द)

'दर्शन अनन्त' गुण पाए, प्रभु लोकालोक दिखाए ।
हम जिनवर के गुण गाएँ, पद सादर शीश झुकाएँ ॥३५॥

ॐ ह्रीं अनन्त दर्शन सहित श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

प्रभु ज्ञानावरणी नाशे, फिर 'केवल ज्ञान' प्रकाशे ।
हम जिनवर के गुण गाएँ, पद सादर शीश झुकाएँ ॥३६॥

ॐ ह्रीं अनन्तज्ञान सहित श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

प्रभु मोह कर्म के नाशी, जिनवर 'अनन्त सुखराशी' ।
हम जिनवर के गुण गाएँ, पद सादर शीश झुकाएँ ॥३७॥

ॐ ह्रीं अनन्तसुख सहित श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

न अन्तराय रह पावे, प्रभु 'वीर्यानन्त' जगावें ।
हम जिनवर के गुण गाएँ, पद सादर शीश झुकाएँ ॥३८॥

ॐ ह्रीं अनन्तवीर्य सहिताय श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

अष्ट प्रातिहार्य (नरेन्द्र छन्द)

शत इन्द्रों से अर्चित अर्हत्, प्रातिहार्य वसु पाये ।
'तरु अशोक' शुभ प्रातिहार्य जिन, विशद आप प्रगटाये ॥
शत इन्द्रों से पूज्य जिनेश्वर, की हम महिमा गाते ।
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाकर, सादर शीश झुकाते ॥३९॥

ॐ ह्रीं तरु अशोक सत्प्रातिहार्य सहिताय श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

सघन 'पुष्प की वृष्टी' करके, नभ में सुर हर्षाते ।
ऊर्ध्वमुखी हो पुष्प बरसते, जिन महिमा दिखलाते ॥
शत इन्द्रों से पूज्य जिनेश्वर, की हम महिमा गाते ।
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाकर, सादर शीश झुकाते ॥४०॥

ॐ ह्रीं पुष्पवृष्टि सत्प्रातिहार्य सहिताय श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

देव शरण में हुए अलंकृत, 'चौसठ चँवर' ढुराते ।
श्वेत चवर ये नम्रभूत हो, विनय पाठ सिखलाते ॥
शत इन्द्रों से पूज्य जिनेश्वर, की हम महिमा गाते ।
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाकर, सादर शीश झुकाते ॥४१॥

ॐ ह्रीं चतु:षष्टि चंवर सत्प्रातिहार्य सहिताय श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

घाति कर्म का क्षय होते ही, भामण्डल जगावें ।
कोटि सूर्य की कांती जिसके, आगे भी शर्मावे ॥
शत इन्द्रों से पूज्य जिनेश्वर, की हम महिमा गाते ।
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाकर, सादर शीश झुकाते ॥४२॥

ॐ ह्रीं भामण्डल सत्प्रातिहार्य सहिताय श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

आओ-आओ जग के प्राणी, प्रभू जगाने आये ।
श्रेष्ठ 'दुन्दुभि' के द्वारा शुभ, वाद्य बजा के गाये ॥
शत इन्द्रों से पूज्य जिनेश्वर, की हम महिमा गाते ।
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाकर, सादर शीश झुकाते ॥४३॥

ॐ ह्रीं देव दुंदुभि सत्प्रातिहार्य सहिताय श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

तीन लोक के ईश प्रभू हैं, 'तीन छत्र' बतलाते ।
गुरु लघुतम लघुक्षेत्र ऊर्ध्व में, धवल कांति फैलाते ॥
शत इन्द्रों से पूज्य जिनेश्वर, की हम महिमा गाते ।
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाकर, सादर शीश झुकाते ॥४४॥

ॐ ह्रीं छत्रत्रय सत्प्रातिहार्य सहिताय श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

अर्हत् के 'गम्भीर वचन' शुभ, प्रमुदित होकर पाते ।
मोह महातम हरने वाले, सभी समझ में आते ॥
शत इन्द्रों से पूज्य जिनेश्वर, की हम महिमा गाते ।
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाकर, सादर शीश झुकाते ॥४५॥

ॐ ह्रीं दिव्य ध्वनि सत्प्रातिहार्य सहिताय श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

समवशरण के मध्य रत्नमय, 'सिंहासन' मनहारी।
कमलासन पर अधर विराजे, अर्हत् जिन त्रिपुरारी॥
शत इन्द्रों से पूज्य जिनेश्वर, की हम महिमा गाते।
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाकर, सादर शीश झुकाते॥४६॥

ॐ ह्रीं सिंहासन सत्प्रातिहार्य सहिताय श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

दोहा– **छियालिस पाए मूलगुण, धर्मनाथ भगवान ।**
यह गुण पाने के लिए, करते हम गुणगान ॥४७॥

ॐ ह्रीं षट् चत्त्वारिंशद गुण सहिताय श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

पंचम वलयः

दोहा– **अड़तालिस यह ऋद्धियाँ, पाते जिन अरहंत ।**
पुष्पांजलि करते चरण, पाने भव का अंत ॥

(पंचम वलयोपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

स्थापना (वीर छन्द)

हे धर्मनाथ! हे धर्मतीर्थ!, तुम धर्म ध्वजा को फहराओ ।
तुम मोक्ष मार्ग के नेता हो, प्रभु राह दिखाने को आओ ॥
तुमने मुक्ति पद वरण किया, तव चरणों हम करते अर्चन ।
मम हृदय कमल के बीच कर्णिका, में आकर तिष्ठो भगवन् ॥
भक्तों ने भाव सहित भगवन्, भक्ती के हेतु पुकारा है ।
न देर करो उर में आओ, यह तो अधिकार हमारा है ॥

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथ जिनेन्द्र! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथ जिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथ जिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितौ भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

४८ ऋद्धियों के अर्घ्य

(चौपाई)

केवल बुद्धि ऋद्धि के धारी, चार घातिया नाशनहारी ।
तप कर मुनि ऋद्धी प्रगटाते, उनके पद हम शीश झुकाते ॥१॥

ॐ ह्रीं केवल बुद्धि ऋद्धिधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

उत्तम तप जिन मुनिवर पाते, देशावधि मुनि ज्ञान जगाते ।
तप कर मुनि ऋद्धी प्रगटाते, उनके पद हम शीश झुकाते ॥२॥

ॐ ह्रीं देशावधि ऋद्धिधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

परमावधि ज्ञान प्रगटावें, फिर निज केवलज्ञान जगावें ।
तप कर मुनि ऋद्धी प्रगटाते, उनके पद हम शीश झुकाते ॥३॥
ॐ ह्रीं परमावधि ऋद्धिधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।
सर्वावधी ज्ञान के धारी, केवल ज्ञानी हों शिवकारी ।
तप कर मुनि ऋद्धी प्रगटाते, उनके पद हम शीश झुकाते ॥४॥
ॐ ह्रीं सर्वावधी ऋद्धिधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।
अनन्तावधि मुनिवर जी पाएँ, परम विशुद्धी हृदय जगाएँ ।
तप कर मुनि ऋद्धी प्रगटाते, उनके पद हम शीश झुकाते ॥५॥
ॐ ह्रीं अनन्तावधि ऋद्धिधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।
बीज बुद्धि ऋद्धीधर गाये, बीज भूत सब ज्ञान जगाए ।
तप कर मुनि ऋद्धी प्रगटाते, उनके पद हम शीश झुकाते ॥६॥
ॐ ह्रीं बीज बुद्धि ऋद्धिधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।
पदानुसारिणी ऋद्धीधारी, जानें सब आगम अनगारी ।
तप कर मुनि ऋद्धी प्रगटाते, उनके पद हम शीश झुकाते ॥७॥
ॐ ह्रीं पदानुसारिणी ऋद्धिधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।
संभिन्न संश्रोतृ ऋद्धिधर भाई, जाने सब भाषा सुखदायी ।
तप कर मुनि ऋद्धी प्रगटाते, उनके पद हम शीश झुकाते ॥८॥
ॐ ह्रीं संभिन्न संश्रोतृ ऋद्धिधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा ।
स्वयंबुद्ध ऋद्धी जो पाएँ, निज आतम का ज्ञान जगाएँ ।
तप कर मुनि ऋद्धी प्रगटाते, उनके पद हम शीश झुकाते ॥९॥
ॐ ह्रीं स्वयं बुद्ध ऋद्धिधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।
प्रत्येक बुद्ध ऋद्धीधर ज्ञानी, पाएँ संयमादि कल्याणी ।
तप कर मुनि ऋद्धी प्रगटाते, उनके पद हम शीश झुकाते ॥१०॥
ॐ ह्रीं प्रत्येक बुद्धि ऋद्धिधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।
बोधित बुद्ध ऋद्धि शुभ पाते, आगम में निज बोधि जगाते ।
तप कर मुनि ऋद्धी प्रगटाते, उनके पद हम शीश झुकाते ॥११॥

ॐ ह्रीं बोधित बुद्ध ऋद्धिधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।
ऋजूमती ज्ञानी शुभकारी, सरल भाव जानें अनगारी ।
तप कर मुनि ऋद्धी प्रगटाते, उनके पद हम शीश झुकाते ॥१२॥
ॐ ह्रीं ऋजुमति ऋद्धिधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।
विपुलमती ऋद्धी शुभ पाते, आगम से निज बोधि जगाते ।
तप कर मुनि ऋद्धी प्रगटाते, उनके पद हम शीश झुकाते ॥१३॥
ॐ ह्रीं विपुल मति ऋद्धिधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।
कोष्ठ बुद्धि ऋद्धी जो पावें, भिन्न-भिन्न सब विषय बतावें ।
तप कर मुनि ऋद्धी प्रगटाते, उनके पद हम शीश झुकाते ॥१४॥
ॐ ह्रीं कोष्ठ बुद्धि ऋद्धिधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।
दश पूर्वित्व ऋद्धिधर गाये, विद्याओं की चाह भुलाए ।
तप कर मुनि ऋद्धी प्रगटाते, उनके पद हम शीश झुकाते ॥१५॥
ॐ ह्रीं दश पूर्वित्व ऋद्धिधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।
चौदह पूरवधर श्रुत पावें, ऋद्धी से प्रत्यक्ष जगावें ।
तप कर मुनि ऋद्धी प्रगटाते, उनके पद हम शीश झुकाते ॥१६॥
ॐ ह्रीं चौदह पूर्व ऋद्धिधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

(बारहमासा चाल)

ज्योतिष आदिक लक्षण जाने, निमित्त ऋद्धी के द्वारा जी ।
उत्तम तप कर ऋद्धी पाते, श्रेष्ठ सुगुण अनुसारी जी ॥१७॥
ॐ ह्रीं ज्योतिष चारण ऋद्धिधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।
बहु विधि अणिमादिक ऋद्धी शुभ, पाए विक्रिया धारी जी ।
उत्तम तप कर ऋद्धी पाते, श्रेष्ठ सुगुण अनुसारी जी ॥१८॥
ॐ ह्रीं अणिमादिक ऋद्धिधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।
भूमी जल जन्तु आदिक का, घात न हो मुनि द्वारा जी ।
उत्तम तप कर ऋद्धी पाते, श्रेष्ठ सुगुण अनुसारी जी ॥१९॥
ॐ ह्रीं भूचारण ऋद्धिधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

पग छूते ही चलें गगन में, चारण ऋद्धीधारी जी ।
उत्तम तप कर ऋद्धी पाते, श्रेष्ठ सुगुण अनुसारी जी ॥२०॥
ॐ ह्रीं चारण ऋद्धिधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

खग सम चलें गगन में मुनिवर, गगन चारिणी धारी जी ।
उत्तम तप कर ऋद्धी पाते, श्रेष्ठ सुगुण अनुसारी जी ॥२१॥
ॐ ह्रीं गगनचारिणी ऋद्धिधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

वाद कुशल को करें पराजित, परामर्श ऋद्धीधर जी ।
उत्तम तप कर ऋद्धी पाते, श्रेष्ठ सुगुण अनुसारी जी ॥२२॥
ॐ ह्रीं परामर्ष ऋद्धि धारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

विष को अमृत करें ऋद्धी से, आशीनिर्विष धारी जी ।
उत्तम तप कर ऋद्धी पाते, श्रेष्ठ सुगुण अनुसारी जी ॥२३॥
ॐ ह्रीं आशी निर्विष ऋद्धिधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

विष का करें विनाश देखते, दृष्टी निर्विषधारी जी ।
उत्तम तप कर ऋद्धी पाते, श्रेष्ठ सुगुण अनुसारी जी ॥२४॥
ॐ ह्रीं दृष्टी निर्विष ऋद्धिधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

उग्र सुतप की करें साधना, मुनिवर ऋद्धी धारी जी ।
उत्तम तप कर ऋद्धी पाते, श्रेष्ठ सुगुण अनुसारी जी ॥२५॥
ॐ ह्रीं उग्र सुतप ऋद्धिधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

बढ़े देह की कांती अनुपम, दीप्त ऋद्धि के द्वारा जी ।
उत्तम तप कर ऋद्धी पाते, श्रेष्ठ सुगुण अनुसारी जी ॥२६॥
ॐ ह्रीं दीप्त सुतप ऋद्धि धारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

चन्द्र कला सम बढ़े साधना, तप्त सुतप के द्वारा जी ।
उत्तम तप कर ऋद्धी पाते, श्रेष्ठ सुगुण अनुसारी जी ॥२७॥
ॐ ह्रीं तप्त सुतप ऋद्धिधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

वृद्धिंगत नित करें साधना, ऋद्धि महातप द्वारा जी ।
उत्तम तप कर ऋद्धी पाते, श्रेष्ठ सुगुण अनुसारी जी ॥२८॥
ॐ ह्रीं महातप ऋद्धिधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

गिरि सरिता तट करें साधना, ऋद्धि घोर तप द्वारा जी ।
उत्तम तप कर ऋद्धी पाते, श्रेष्ठ सुगुण अनुसारी जी ॥२९॥
ॐ ह्रीं घोर तप ऋद्धिधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

वन में निर्विकार हो तिष्ठें, ऋद्धि पराक्रम धारी जी ।
उत्तम तप कर ऋद्धी पाते, श्रेष्ठ सुगुण अनुसारी जी ॥३०॥
ॐ ह्रीं घोर पराक्रम ऋद्धिधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

महागुणों को पाने वाले, ऋद्धि घोर गुण धारी जी ।
उत्तम तप कर ऋद्धी पाते, श्रेष्ठ सुगुण अनुसारी जी ॥३१॥
ॐ ह्रीं घोर गुण ऋद्धिधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

काम विजय को पाने वाले, ऋद्धि ब्रह्मचर्य धारी जी ।
उत्तम तप कर ऋद्धी पाते, श्रेष्ठ सुगुण अनुसारी जी ॥३२॥
ॐ ह्रीं घोर ब्रह्मचर्य ऋद्धिधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

(भुजंगप्रयात)

आमर्ष औषधि जिन सिद्ध पाए ।
सकल रोग स्पर्श करते नशाए ॥
सुतप धारते श्रेष्ठ ऋद्धी के धारी ।
विशद ढोक ऋषि के चरण में हमारी ॥३३॥
ॐ ह्रीं आमर्षौषधि ऋद्धिधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

क्ष्वेलौषधी श्रेष्ठ ऋद्धी के धारी ।
बने क्ष्वेल औषधि है ऋद्धी सुखारी ॥
सुतप धारते श्रेष्ठ ऋद्धी के धारी ।
विशद ढोक ऋषि के चरण में हमारी ॥३४॥
ॐ ह्रीं क्ष्वेलौषधि ऋद्धिधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

विडौषधी जिन्हें प्राप्त ऋद्धी है भाई ।
बने मूत्र औषधि शुभम् सौख्यदायी ॥

सुतप धारते श्रेष्ठ ऋद्धि के धारी ।
विशद ढोक ऋषि के चरण में हमारी ॥३५॥

ॐ ह्रीं विडौषधि ऋद्धिधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

बने जल्ल औषधि मुनी तन का प्यारा ।
ऋद्धी का पाया है जिनने सहारा ॥
सुतप धारते श्रेष्ठ ऋद्धी के धारी ।
विशद ढोक ऋषि के चरण में हमारी ॥३६॥

ॐ ह्रीं जल्ल औषधि ऋद्धिधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

करे मुनि को स्पर्श वायु बहाए ।
तभी रोग वायू सभी के नशाए ॥
सुतप धारते श्रेष्ठ ऋद्धी के धारी ।
विशद ढोक ऋषि के चरण में हमारी ॥३७॥

ॐ ह्रीं सर्वौषधि ऋद्धिधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

मन बल बढ़ाते हैं मुनि ऋद्धिधारी ।
करें श्रुत का चिन्तन मुहूरत में भारी ॥
सुतप धारते श्रेष्ठ ऋद्धी के धारी ।
विशद ढोक ऋषि के चरण में हमारी ॥३८॥

ॐ ह्रीं मन बल ऋद्धिधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

वचन बल करें प्राप्त ऋद्धी के धारी ।
करें श्रुत का वर्णन मुहूरत में भारी ॥
सुतप धारते श्रेष्ठ ऋद्धी के धारी ।
विशद ढोक ऋषि के चरण में हमारी ॥३९॥

ॐ ह्रीं वचन बल ऋद्धिधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

मुनि काय बल ऋद्धि धारी जो होते।
वे श्रम खेद तन की थकावट के खोते ॥
सुतप धारते श्रेष्ठ ऋद्धी के धारी ।
विशद ढोक ऋषि के चरण में हमारी ॥४०॥

ॐ ह्रीं काय बल ऋद्धिधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

मुनि क्षीर स्रावि शुभ ऋद्धी जो पावें ।
विरस भोज को क्षीर सम जो बनावें ॥
सुतप धारते श्रेष्ठ ऋद्धी के धारी ।
विशद ढोक ऋषि के चरण में हमारी ॥४१॥

ॐ ह्रीं क्षीर स्रावी ऋद्धिधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

बने रुक्ष आहार रसदार भाई ।
मुनी सर्पि स्रावी के कर सौख्यदायी ॥
सुतप धारते श्रेष्ठ ऋद्धी के धारी ।
विशद ढोक ऋषि के चरण में हमारी ॥४२॥

ॐ ह्रीं सर्पि स्रावी ऋद्धिधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

मधुस्रावि के हाथ में रुक्ष आहार ।
मधु सम मधुर हो शुभ, ऋद्धि के आधार ॥
सुतप धारते श्रेष्ठ ऋद्धी के धारी ।
विशद ढोक ऋषि के चरण में हमारी ॥४३॥

ॐ ह्रीं मधुस्रावि ऋद्धिधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

मुनि अमृतस्रावि हैं ऋद्धी के धारी ।
बने रुक्ष आहार, अमृत सा भारी ॥
सुतप धारते श्रेष्ठ ऋद्धी के धारी ।
विशद ढोक ऋषि के चरण में हमारी ॥४४॥

ॐ ह्रीं अमृतस्रावि ऋद्धि धारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जहाँ जीमते ऋद्धि अक्षीण धारी ।
बढ़े श्रेष्ठ आहार अक्षय हो भारी ॥
सुतप धारते श्रेष्ठ ऋद्धी के धारी ।
विशद ढोक ऋषि के चरण में हमारी ॥४५॥

ॐ ह्रीं अक्षीण ऋद्धिधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

बढ़े सिद्ध राशि हो वर्धमान भारी ।
बने सिद्ध वह भी जो हैं ऋद्धि धारी ॥
सुतप धारते श्रेष्ठ ऋद्धी के धारी ।
विशद ढोक ऋषि के चरण में हमारी ॥४६॥

ॐ ह्रीं केवलज्ञान ऋद्धिधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

करें दर्श सिद्धायतन के निराले ।
मुनिश्रेष्ठ हैं जो महत् ज्ञान वाले ॥
सुतप धारते श्रेष्ठ ऋद्धी के धारी ।
विशद ढोक ऋषि के चरण में हमारी ॥४७॥

ॐ ह्रीं सिद्धायतन ऋद्धिधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

णमो भयवदोमहदि महावीर नामी ।
कहाए प्रभू वर्धमान मोक्षगामी ॥
सुतप धारते श्रेष्ठ ऋद्धी के धारी ।
विशद ढोक ऋषि के चरण में हमारी ॥४८॥

ॐ ह्रीं वर्धमान ऋद्धिधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

दोहा– अड़तालिस यह ऋद्धियाँ, पाते हैं भगवान ।
कर्म नाश करके विशद, प्राप्त करें निर्वाण ॥४९॥

ॐ ह्रीं अष्टचत्त्वारिंशद ऋद्धीधारक श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

जाप्य–ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐंम् अर्हं श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय नमः स्वाहा।

जयमाला

दोहा– धर्मादिक त्रय वर्ग तज, पावें मोक्ष महान ।
जयमाला गाते यहाँ, करने जिन गुणगान ॥

(सखी छन्द)

जय धर्मनाथ हितकारी, इस जग में मंगलकारी ।
पितु भानुराज कहलाए, प्रभु मात सुव्रता पाए ॥
प्रभु चार ध्यान बतलाए, दो उसमें हेय कहाए ।
वह आर्त रौद्र हैं भाई, होते जग में दुखदायी ॥

है धर्म शुक्ल शुभकारी, यह ध्यान रहे हितकारी ।
मुक्ती के कारण गाये, ये उपादेय कहलाए ॥
प्रभु शुक्ल ध्यान जब ध्यायें, तब घाती कर्म नशाएँ ।
फिर केवल ज्ञान जगाएँ, सुर समवशरण बनवाएँ ॥
सौ इद्र शरण में आवें, शुभ प्रातिहार्य प्रगटावें ।
प्रभु जीवों को हितकारी, उपदेश दिए शुभकारी ॥
प्रभु चिदानन्द कहलाए, मुनिवृन्द प्रभू गुण गाए ।
जो दर्श आपका पाए, वह निज सौभाग्य जगाए ॥
मम पुण्य उदय जो आया, प्रभु दर्श आपका पाया ।
हम काल अनादी स्वामी, भटके जग अन्तर्यामी ॥
तुम ही ब्रह्मा कहलाए, विष्णु महेश तुम गाए ।
तुमने शिव पद को पाया, जीवों को मार्ग दिखाया ॥
हम शरण आपकी आए, इस जग से प्रभु सताए ।
अब मुक्ती राह दिखाओ, हमको भव पार लगाओ ॥
जय ऋद्धि सिद्धि के दाता, इस जग के भाग्य विधाता ।
तव भक्ती से गुण गावें, वे जीव सुखी हो जावें ॥
प्रभु जग दुख मैटन हारे, जन जन के रहे सहारे ।
जो चरण शरण में आया, जग का सुख वैभव पाया ॥
अब आई मेरी बारी, भव पार करो त्रिपुरारी ।
हम 'विशद' भावना भाते, पद सादर शीश झुकाते ॥

(छन्द घत्तानन्द)

जय धर्म जिनेशं, हित उपदेशं, धर्म विशेषं दातारं ।
जय धर्माधारं, शिव कर्तारं, भव हरतारं सुखकारं ॥

ॐ ह्रीं तीर्थंकर श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय जयमाला पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

दोहा– जिन शासन के कोष जिन, दिव्य भानु सम रूप ।
धर्मनाथ को पूजकर, पाएँ धर्म स्वरूप ॥

इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिं क्षिपेत्

श्री धर्मनाथ भगवान की आरती

(तर्ज:- इह विधि मंगल...)

धर्मनाथ की आरति कीजे, अपना जन्म सफल कर लीजे।
पिता भानु नृप जिनके गाए, मात सुव्रता जी कहलाए।। धर्मनाथ..
रत्नपुरी के स्वामी जानो, वज्र चिह्न दाये पग मानो।। धर्मनाथ...
आयु पूर्व दश लाख बताई, धनुष पैंतालिस है ऊँचाई।। धर्मनाथ..
सुदि वैशाख अष्टमी भाई, गर्भकल्याण की तिथि गाई।। धर्मनाथ..
माघ सुदी तेरस को स्वामी, जन्म लिए प्रभु अन्तर्यामी।। धर्मनाथ..
पौष पूर्णिमा का दिन आया, प्रभु ने केवलज्ञान जगाया।। धर्मनाथ..
ज्येष्ठ शुक्ल की चौथ बताई, तीर्थराज से मुक्ती पाई।। धर्मनाथ..
'विशद' भावना यही हमारी, जीवन हो यह मंगलकारी।। धर्मनाथ..

प्रशस्ति

ॐ नम: सिद्धेभ्य: श्री मूलसंघे कुन्दकुन्दाम्नाये बलात्कार गणे सेन गच्छे नन्दी संघस्य परम्परायां श्री आदि सागराचार्य जातास्तत् शिष्य: श्री महावीरकीर्ति आचार्य जातास्तत् शिष्या: श्री विमलसागराचार्या जातास्तत शिष्या श्री भरत सागराचार्य श्री विराग सागराचार्या: जातास्तत् शिष्या: आचार्य विशदसागराचार्य जम्बूद्वीपे भरत क्षेत्रे आर्यखण्डे भारतदेशे दिल्ली प्रान्ते शास्त्री नगर स्थित 1008 श्री शांतिनाथ दि. जैन मंदिर मध्ये अद्य वीर निर्वाण सम्वत् 2538 वि.सं. 2069 मासोत्तम मासे द्वितिय भादौ मासे शुक्लपक्षे बारसतिथि दिन गुरुवासरे श्री धर्मनाथ विधान रचना समाप्ति इति शुभं भूयात्।

श्री घंटाकर्ण स्तोत्र

ॐ घंटाकर्णे महावीरः सर्वव्याधि विनाशकः।
विस्फोटकभयं प्राप्ते रक्ष-रक्ष महाबलः।।1।।
यत्र त्वं तिष्ठते देव, लिखितोऽक्षर पंक्तिभिः।
रोगास्तत्र प्रणश्यन्ति, वातपित्तकफोद्भवाः।।2।।
तत्र राजभयं नास्ति, यान्ति कर्णे जपात्यक्षम्।
शाकिनी भूतवेताला, राक्षसाः प्रभवन्ति न।।3।।
नाकाले मरणं तस्य न च सर्पेण दश्यते।
अग्निचौरभयं नास्ति ॐ ह्रीं श्रीं घंटाकर्ण।
नमोस्तुते ! ॐ नर वीर ! ठः ठः ठः स्वाहा !!

सूचना-घण्टाकर्ण मन्त्र का 21 बार जप करने से राजभय, चोरभय, अग्नि और सर्प का भय दूर होवें सब प्रकार की भूत-प्रेत बाधा भी दूर होती है। सर्व विपत्ति-हर्त्ता मंत्र है।

श्री धर्मनाथ चालीसा

दोहा- **रहे पूज्य नव देवता, तीनों लोक महान्।**
धर्मनाथ भगवान का, करते हम गुणगान॥
चालीसा गाते यहाँ, भाव सहित शुभकार।
वन्दन करते पद युगल, जिन पद बारम्बार॥

(चौपाई)

लोकालोक रहा शुभकारी, मध्य लोक जिसमें मनहारी।
मध्य में जम्बूद्वीप बताया, भरत क्षेत्र जिसमें शुभ गाया॥
जिसमें अंग देश है भाई, रत्नपुरी नगरी सुखदायी।
भानुराय जिसमें कहलाए, कुरू वंश के स्वामी गाए॥
कश्यप गोत्री जो कहलाए, महारानी, सुव्रता जो पाए।
वैसाख शुक्ल त्रयोदशी जानो, प्रातःकाल समय पहिचानो॥
शुभ नक्षत्र रेवती पाए, चयकर सर्वार्थ सिद्धि से आए।
तीर्थंकर प्रवृति शुभ पाए, प्रभु जी माँ के गर्भ में आए॥
माघ शुक्ल तेरस शुभकारी, पुष्य नक्षत्र रहा मनहारी।
अतिशय जन्म प्रभुजी पाए, जन्म कल्याणक जो कहलाए॥
कर्क राशि का योग बताया, राशी स्वामी चन्द्र कहाया।
स्वर्ण वर्ण तन का है भाई, धनुष पैंतालिस है ऊँचाई॥
वर्ष लाख दश आयू पाए, वज्रदण्ड पहिचान कराए।
उल्कापात देखकर स्वामी, दीक्षा पाए अन्तर्यामी॥
माघ शुक्ल तेरस शुभकारी, पुष्य नक्षत्र रहा मनहारी।
दीक्षा नगर रत्नपुर गाया, सायंकाल का समय बताया॥
देव पालकी लेकर आये, नागदत्ता शुभ नाम बताए।
शालीवन उद्यान बताया, दीर्घपर्ण तरुवर कहलाया॥

एक सौ अस्सी धनुष ऊँचाई, दीक्षा वृक्ष की जानो भाई ।
एक सहस राजा भी आए, साथ में प्रभु के दीक्षा पाए ॥
एक वर्ष तप काल बताया, बाद में केवलज्ञान जगाया ।
पौष शुक्ल पूनम शुभ जानो, संध्याकाल समय शुभ मानो ॥
इन्द्र राज-चरणों में आया, धन कुबेर को साथ में लाया ।
साथ में देव अन्य कई आए, समवशरण रचना बनवाए ॥
पाँच योजन विस्तार बताया, पद्मासन प्रभु ने शुभ पाया ।
साथ में केवलज्ञान जगाए, साढ़े चार सहस बतलाए ॥
सात हजार विक्रियाधारी, नौ सौ पूरब धर अविकारी ।
चालिस सहस सात सौ भाई, शिक्षक की संख्या बतलाई ॥
चार हजार पाँच सौ जानो, मनःपर्यय ज्ञानी पहिचानो ।
अवधि ज्ञानधारी मुनि आए, तीन सहस छह सौ बतलाए ॥
दो हजार आठ सौ भाई, वादी मुनि संख्या बतलाई ।
प्रभु के साथ मुनीश्वर आए, चौंसठ सहस पूर्ण कहलाए ॥
गणधर तैंतालिस कहलाए, प्रथम गणि अरिष्टसेन कहाए ।
यक्ष किंपुरुष जानो भाई, अनन्तमती यक्षी कहलाई ॥
प्रभु सम्मेद शिखर पर आए, कूट सुदत्तवर अनुपम गाए ।
योग निरोध किए जिन स्वामी, एक माह पहले शिवगामी ॥
कायोत्सर्गासन प्रभु पाए, स्वामी प्रातः मोक्ष सिधाए ।
चौथ ज्येष्ठ शुक्ला की जानो, मोक्ष कल्याणक की तिथिमानो ॥
जिन प्रतिमाएँ हैं शुभकारी, वीतराग मुद्रा अविकारी ।
दर्शन कर सद्दर्शन पाएँ, अपने हम सौभाग्य जगाए ॥

दोहा– चालीसा चालीस दिन, पढ़ें सुने जो लोग ।
सुख शांती सौभाग्य का, मिले उन्हें संयोग ॥
धर्मनाथ के चरण को, ध्याये जो गुणवान ।
अल्प समय में ही 'विशद', पावे वह निर्वाण ॥

श्री १००८ धर्मनाथ भगवान की आरती

(तर्ज–जीवन है पानी की बूँद)

धर्मनाथ के दर पे शुभ, दीप जलाए रे ।
जिनवर हो–जिनवर, सब आरती गाए रे ॥ टेक॥

मात सुव्रता के जाये, पिता भानु नृप कहलाए ।
रत्नपुरी में जन्म लिया, उस धरती को धन्य किया ॥
वज्र चिन्ह जिनवर की–हो-हो-पहिचान बताए रे ।
जिनवर हो–जिनवर, सब आरती गाए रे ॥१॥
बैशाख सुदी त्रयोदशी जानो, गर्भ में प्रभु आये मानो ।
माघ सुदी तेरस आई, जन्म लिया प्रभु ने भाई ॥
दस लाख पूरव की आयु, हो-हो जिनवर जी पाए रे ।
जिनवर हो–जिनवर, सब आरती गाए रे॥२॥
धनुष पैंतालिस ऊँचाई, जिनवर के तन की गाई ।
माघ सुदी तेरस भाई, प्रभु जी ने दीक्षा पाई ॥
समवशरण आकर के, हो-हो शुभ देव बनाए रे ।
जिनवर हो–जिनवर, सब आरती गाए रे ॥३॥
पौष पूर्णिमा दिन आया, 'विशद' ज्ञान प्रभु ने पाया ।
अनन्त चतुष्टय प्रकटाए, देव इन्द्र सब सिरनाए ॥
सम्मेद शिखर पे जाके, हो-हो प्रभु ध्यान लगाए रे ।
जिनवर हो–जिनवर, सब आरती गाए रे ॥४॥
ज्येष्ठ शुक्ल की चौथ अहा, मंगलमय दिन श्रेष्ठ कहा ।
जिनवर ने शिवपद पाया, मुक्ति वधू को अपनाया ॥
जिन भक्ति से हमको, हो-हो शिव पद मिल जाए रे ।
जिनवर हो–जिनवर, सब आरती गाए रे ॥५॥

प.पू. 108 आचार्य श्री विशदसागरजी महाराज की पूजन

(स्थापना)

पुण्य उदय से हे ! गुरुवर, दर्शन तेरे मिल पाते हैं।
श्री गुरुवर के दर्शन करके, हृदय कमल खिल जाते हैं॥
गुरु आराध्य हम आराधक, करते उर से अभिवादन।
मम् हृदय कमल में आ तिष्ठो, गुरु करते हैं हम आह्वानन्॥

ॐ ह्रूँ 18 आचार्य श्री विशदसागर मुनीन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् इति आह्वनन् अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम् सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(ताटंक छंद)

सांसारिक भोगों में फँसकर, ये जीवन वृथा गंवाया है।
रागद्वेष की वैतरणी से, अब तक पार न पाया है॥
विशद सिंधु के श्री चरणों में, निर्मल जल हम लाए हैं।
भव तापों का नाश करो, भव बंध काटने आये हैं॥

ॐ ह्रूँ 18 आचार्य श्री विशदसागर मुनीन्द्राय जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

क्रोध रूप अग्नि से अब तक, कष्ट बहुत ही पाये हैं।
कष्टों से छुटकारा पाने, गुरु चरणों में आये हैं॥
विशद सिंधु के श्री चरणों में, चंदन घिसकर लाये हैं।
संसार ताप का नाश करो, भव बंध नशाने आये हैं॥

ॐ ह्रूँ 18 आचार्य श्री विशदसागर मुनीन्द्राय संसार ताप विध्वंशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

चारों गतियों में अनादि से, बार-बार भटकाये हैं।
अक्षय निधि को भूल रहे थे, उसको पाने आये हैं॥

विशद सिंधु के श्री चरणों में, अक्षय अक्षत लाये हैं।
अक्षय पद हो प्राप्त हमें, हम गुरु चरणों में आये हैं॥

ॐ ह्रूँ 18 आचार्य श्री विशदसागर मुनीन्द्राय अक्षय पद प्राप्ताय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

काम बाण की महावेदना, सबको बहुत सताती है।
तृष्णा जितनी शांत करें वह, उतनी बढ़ती जाती है॥
विशद सिंधु के श्री चरणों में, पुष्प सुगंधित लाये हैं।
काम बाण विध्वंश होय गुरु, पुष्प चढ़ाने आये हैं॥

ॐ ह्रूँ 18 आचार्य श्री विशदसागर मुनीन्द्राय कामबाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

काल अनादि से हे गुरुवर ! क्षुधा से बहुत सताये हैं।
खाये बहु मिष्ठान जरा भी, तृप्त नहीं हो पाये हैं॥
विशद सिंधु के श्री चरणों में, नैवेद्य सुसुन्दर लाये हैं।
क्षुधा शांत कर दो गुरु भव की ! क्षुधा मेटने आये हैं॥

ॐ ह्रूँ 18 आचार्य श्री विशदसागर मुनीन्द्राय क्षुधा रोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोह तिमिर में फंसकर हमने, निज स्वरूप न पहिचाना।
विषय कषायों में रत रहकर, अंत रहा बस पछताना॥
विशद सिंधु के श्री चरणों में, दीप जलाकर लाये हैं।
मोह अंध का नाश करो, मम् दीप जलाने आये हैं॥

ॐ ह्रूँ 18 आचार्य श्री विशदसागर मुनीन्द्राय मोहान्धकार विध्वंशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अशुभ कर्म ने घेरा हमको, अब तक ऐसा माना था।
पाप कर्म तज पुण्य कर्म को, चाह रहा अपनाना था॥

विशद सिंधु के श्री चरणों में, धूप जलाने आये हैं।
आठों कर्म नशाने हेतु, गुरु चरणों में आये हैं॥

ॐ ह्रूँ 18 आचार्य श्री विशदसागर मुनीन्द्राय अष्टकर्म दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

पिस्ता अरु बादाम सुपाड़ी, इत्यादि फल लाये हैं।
पूजन का फल प्राप्त हमें हो, तुमसा बनने आये हैं॥
विशद सिंधु के श्री चरणों में, भाँति-भाँति फल लाये हैं।
मुक्ति वधु की इच्छा करके, गुरु चरणों में आये हैं॥

ॐ ह्रूँ 18 आचार्य श्री विशदसागर मुनीन्द्राय मोक्ष फल प्राप्ताय फलम् निर्वपामीति स्वाहा।

प्रासुक अष्ट द्रव्य हे गुरुवर ! थाल सजाकर लाये हैं।
महाव्रतों को धारण कर लें, मन में भाव बनाये हैं॥
विशद सिंधु के श्री चरणों में, अर्घ समर्पित करते हैं।
पद अनर्घ हो प्राप्त हमें गुरु, चरणों में सिर धरते हैं॥

ॐ ह्रूँ 18 आचार्य श्री विशदसागर मुनीन्द्राय अनर्घ पद प्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा- **विशद सिंधु गुरुवर मेरे, वंदन करूँ त्रिकाल।**
मन-वच-तन से गुरु की, करते हैं जयमाल॥

(चौबोला छंद)

गुरुवर के गुण गाने को, अर्पित है जीवन के क्षण-क्षण।
श्रद्धा सुमन समर्पित हैं, हर्षायें धरती के कण-कण॥
छतरपुर के कुपी नगर में, गूँज उठी शहनाई थी।
श्री नाथूराम के घर में अनुपम, बजने लगी बधाई थी॥

बचपन में चंचल बालक के, शुभादर्श यूँ उमड़ पड़े।
ब्रह्मचर्य व्रत पाने हेतु, अपने घर से निकल पड़े॥
आठ फरवरी सन् छियानवे को, गुरुवर से संयम पाया।
मोक्ष ज्ञान अन्तर में जागा, मन मयूर अति हर्षाया॥
पद आचार्य प्रतिष्ठा का शुभ, दो हजार सन् पाँच रहा।
तेरह फरवरी बसंत पंचमी, बने गुरु आचार्य अहा॥
तुम हो कुंद-कुंद के कुन्दन, सारा जग कुन्दन करते।
निकल पड़े बस इसलिए, भवि जीवों की जड़ता हरते॥
मंद मधुर मुस्कान तुम्हारे, चेहरे पर बिखरी रहती।
तव वाणी अनुपम न्यारी है, करुणा की शुभ धारा बहती है॥
तुममें कोई मोहक मंत्र भरा, या कोई जादू टोना है।
है वेश दिगम्बर मनमोहक अरु, अतिशय रूप सलौना है॥
हैं शब्द नहीं गुण गाने को, गाना भी मेरा अन्जाना।
हम पूजन स्तुति क्या जाने, बस गुरु भक्ति में रम जाना॥
गुरु तुम्हें छोड़ न जाएँ कहीं, मन में ये फिर-फिरकर आता।
हम रहें चरण की शरण यहीं, मिल जाये इस जग की साता॥
सुख साता को पाकर समता से, सारी ममता का त्याग करें।
श्री देव-शास्त्र-गुरु के चरणों में, मन-वच-तन अनुराग करें॥
गुरु गुण गाएँ गुण को पाने, औ सर्वदोष का नाश करें।
हम विशद ज्ञान को प्राप्त करें, औ सिद्ध शिला पर वास करें॥

ॐ ह्रूँ 18 आचार्य श्री विशदसागर मुनीन्द्राय अनर्घ पद प्राप्ताय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- **गुरु की महिमा अगम है, कौन करे गुणगान।**
मंद बुद्धि के बाल हम, कैसे करें बखान॥

इत्याशीर्वादः (पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

ब्र. आस्था दीदी

आचार्य श्री 108 विशदसागरजी महाराज की आरती

(तर्ज:- माई री माई मुंडेर पर तेरे बोल रहा कागा.....)

जय-जय गुरुवर भक्त पुकारे, आरति मंगल गावे।
करके आरती विशद गुरु की, जन्म सफल हो जावे ।।
गुरुवर के चरणों में नमन्.....4 मुनिवर के.....

ग्राम कुपी में जन्म लिया है, धन्य है इन्दर माता।
नाथूराम जी पिता आपके, छोड़ा जग से नाता।।
सत्य अहिंसा महाव्रती की.....2, महिमा कहीं न जाये।
करके आरती विशद गुरु की, जन्म सफल हो जावे।।
गुरुवर के चरणों में नमन्.....4 मुनिवर के.....

सूरज सा है तेज आपका, नाम रमेश बताया।
बीता बचपन आयी जवानी, जग से मन अकुलाया।।
जग की माया को लखकर के.....2, मन वैराग्य समावे।
करके आरती विशद गुरु की, जन्म सफल हो जावे।।
गुरुवर के चरणों में नमन्.....4 मुनिवर के.....

जैन मुनि की दीक्षा लेकर, करते निज उद्धारा।
विशद सिंधु है नाम आपका, विशद मोक्ष का द्वारा।।
गुरु की भक्ति करने वाला.....2, उभय लोक सुख पावे।
करके आरती विशद गुरु की, जन्म सफल हो जावे।।
गुरुवर के चरणों में नमन्.....4 मुनिवर के.....

धन्य है जीवन, धन्य है तन-मन, गुरुवर यहाँ पधारे।
सगे स्वजन सब छोड़ दिये हैं, आतम रहे निहारे।।
आशीर्वाद हमें दो स्वामी.....2, अनुगामी बन जायें।
करके आरती विशद गुरु की, जन्म सफल हो जावे।।
गुरुवर के चरणों में नमन्...4 मुनिवर के... जय...जय।।

रचयिता : श्रीमती इन्दुमती गुप्ता, श्योपुर

वर्तमान के सर्वाधिक विधान रचयिता प.पू. आचार्य श्री 108 विशदसागरजी महाराज द्वारा रचित 140 विधानों की विशाल श्रृंखला

1. श्री आदिनाथ महामण्डल विधान
2. श्री अजितनाथ महामण्डल विधान
3. श्री संभवनाथ महामण्डल विधान
4. श्री अभिनन्दननाथ महामण्डल विधान
5. श्री सुमतिनाथ महामण्डल विधान
6. श्री पद्मप्रभ महामण्डल विधान
7. श्री सुपार्श्वनाथ महामण्डल विधान
8. श्री चन्द्रप्रभु महामण्डल विधान
9. श्री पुष्पदंत महामण्डल विधान
10. श्री शीतलनाथ महामण्डल विधान
11. श्री श्रेयांसनाथ महामण्डल विधान
12. श्री वासुपूज्य महामण्डल विधान
13. श्री विमलनाथ महामण्डल विधान
14. श्री अनन्तनाथ महामण्डल विधान
15. श्री धर्मनाथ महामण्डल विधान
16. श्री शांतिनाथ महामण्डल विधान
17. श्री कुंथुनाथ महामण्डल विधान
18. श्री अरहनाथ महामण्डल विधान
19. श्री मल्लिनाथ महामण्डल विधान
20. श्री मुनिसुव्रतनाथ महामण्डल विधान
21. श्री नमिनाथ महामण्डल विधान
22. श्री नेमिनाथ महामण्डल विधान
23. श्री पार्श्वनाथ महामण्डल विधान
24. श्री महावीर महामण्डल विधान
25. श्री पंचपरमेष्ठी विधान
26. श्री णमोकार मंत्र महामण्डल विधान
27. श्री सर्वसिद्धीप्रदायक श्री भक्तामर महामण्डल विधान
28. श्री सम्मेदशिखर विधान
29. श्री श्रुत स्कंध विधान
30. श्री यागमण्डल विधान
31. श्री जिनबिम्ब पंचकल्याणक विधान
32. श्री त्रिकालवर्ती तीर्थंकर विधान
33. श्री कल्याणकारी कल्याण मंदिर विधान
34. लघु समवशरण विधान
35. सवदोष प्रायश्चित्त विधान
36. लघु पंचमेरु विधान
37. लघु नंदीश्वर महामण्डल विधान
38. श्री चँवलेश्वर पार्श्वनाथ विधान
39. श्री जिनगुण सम्पत्ति विधान
40. एकीभाव स्तोत्र विधान
41. श्री ऋषिमण्डल विधान
42. श्री विषापहार स्तोत्र महामण्डल विधान
43. श्री भक्तामर महामण्डल विधान
44. वास्तु महामण्डल विधान
45. लघु नवग्रह शांति महामण्डल विधान
46. सूर्य अरिष्टनिवारक श्री पद्मप्रभ विधान
47. श्री चौंसठ ऋद्धि महामण्डल विधान
48. श्री कर्मदहन महामण्डल विधान
49. श्री चौबीस तीर्थंकर महामण्डल विधान
50. श्री नवदेवता महामण्डल विधान
51. वृहद् ऋषि महामण्डल विधान
52. श्री नवग्रह शांति महामण्डल विधान
53. कर्मजयी श्री पंच बालयति विधान
54. श्री तत्त्वार्थ सूत्र महामण्डल विधान
55. श्री सहस्त्रनाम महामण्डल विधान
56. वृहद् नंदीश्वर महामण्डल विधान
57. महामृत्युंजय महामण्डल विधान
58. श्री दशलक्षण धर्म विधान
59. श्री रत्नत्रय आराधना विधान
60. श्री सिद्धचक्र महामण्डल विधान
61. अभिनव वृहद् कल्पतरु विधान
62. वृहद् श्री समवशरण महामण्डल विधान
63. श्री चारित्र लब्धि महामण्डल विधान
64. श्री अनन्तव्रत महामण्डल विधान
65. कालसर्पयोग निवारक महामण्डल विधान
66. श्री आचार्य परमेष्ठी महामण्डल विधान
67. श्री सम्मेदशिखर कूटपूजन विधान
68. त्रिविधान संग्रह-1
69. पंचविधान संग्रह
70. श्री इन्द्रध्वज महामण्डल विधान
71. लघु धर्मचक्र विधान
72. अर्हत् महिमा विधान
73. सरस्वती विधान
74. विशद महाअर्चना विधान
75. विधान संग्रह (प्रथम)
76. विधान संग्रह (द्वितीय)
77. कल्याण मंदिर विधान (वड़ा गाँव)
78. श्री अहिच्छत्र पार्श्वनाथ विधान
79. विदेह क्षेत्र महामण्डल विधान
80. अर्हत् नाम विधान।
81. सम्यक् आराधना विधान
82. लघु नवदेवता विधान
83. लघु मृत्युञ्जय विधान
84. शान्ति प्रदायक शान्तिनाथ विधान
85. मृत्युञ्जय विधान
86. लघु जम्बूद्वीप विधान
87. चारित्र शुद्धिव्रत विधान
88. क्षायिक नवलब्धि विधान
89. लघु स्वयंभू स्तोत्र विधान
90. श्री गोम्मटेश बाहुबली विधान
91. वृहद् निर्वाण क्षेत्र विधान
92. एक सौ सत्तर तीर्थंकर विधान
93. तीन लोक विधान
94. कल्पद्रुम विधान
95. श्री सम्मेद शिखर चौबीसी निर्वाण क्षेत्र विधान
96. श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर विधान (लघु)
97. सहस्त्रनाम विधान (लघु)
98. तत्त्वार्थ सूत्र विधान (लघु)
99. त्रैलोक्य मण्डल विधान (लघु)
100. पुण्यास्त्रव विधान
101. सप्त ऋषि विधान
102. तेरह द्वीप मण्डल विधान
103. श्री शान्ति-कुन्थु-अरहनाथ मण्डल विधान
104. श्रावक व्रत दोष प्रायश्चित्त विधान
105. तीर्थंकर पंचकल्याणक तीर्थ विधान
106. सम्यक् दर्शन विधान
107. श्रुतज्ञान व्रत विधान
108. ज्ञान पच्चीसी विधान
109. चारित्र शुद्धि विधान
110. लघु शांति विधान
111. कलिकुण्ड पार्श्वनाथ विधान
112. तीर्थंकर पंचकल्याणक तिथि विधान
113. विजय श्री विधान
114. श्री आदिनाथ विधान (रानीला)
115. श्री शांतिनाथ विधान (सामोद)
116. श्री आदिनाथ पंचकल्याणक विधान
117. षट् खण्डागम विधान
118. दिव्य देशना विधान
119. श्री आदिनाथ विधान (रेवाड़ी)
120. नवग्रह शांति विधान
121. रक्षा बन्धन विधान
122. सोलह कारण विधान
123. तीर्थंकर विधान
124. गणधर वलय विधान (लघु)
125. गणधर वलय विधान (वृहद्)
126. गिरनार गिरि विधान
127. श्री चन्द्रप्रभु विधान (तिजारा)
128. ऋषि मण्डल विधान
129. कालसर्प दोष निवारक विधान
130. शनि ग्रह अरिष्ट निवारक विधान
131. वास्तु विधान (लघु)
132. भक्तामर विधान (चौपाई)
133. पद्मावती विधान
134. क्षेत्रपाल विधान
135. चौबीस तीर्थंकर निर्वाण भक्ति विधान
136. बड़े बाबा विधान
137. कल्पद्रुम विधान (लघु)
138. लक्ष्मी प्राप्ति विधान
139. महावीर समवशरण विधान
140. चान्दनपुर महावीर विधान
141. विशद पञ्चागम संग्रह
142. जिन गुरु भक्ति संग्रह
143. धर्म की दस लहरें
144. स्तुति स्तोत्र संग्रह
145. विराग वंदन
146. बिन सिले मुरझा गए
147. जिन्दगी क्या है
148. धर्म प्रवाह
149. भक्ति के फूल
150. विशद श्रमण चर्या
151. रत्नकरण्ड श्रावकाचार चौपाई
152. इष्टोपदेश चौपाई
153. द्रव्य संग्रह चौपाई
154. लघु द्रव्य संग्रह चौपाई
155. समाधितन्त्र चौपाई
156. सुभाषित रत्नावलि चौपाई
157. संस्कार विज्ञान
158. बाल विज्ञान भाग-3
159. नैतिक शिक्षा भाग-1,2,3
160. विशद स्तोत्र संग्रह
161. भगवती आराधना
162. चिंतवन सरोवर भाग-1
163. चिंतवन सरोवर भाग-2
164. जीवन की मन:स्थितियाँ
165. आराध्य अर्चना
166. आराधना के सुमन
167. मूक उपदेश भाग-1
168. मूक उपदेश भाग-2
169. विशद प्रवचन पर्व
170. विशद ज्ञान ज्योति
171. जरा सोचो तो
172. विशद भक्ति पीयूष
173. विशद मुक्तावली
174. संगीत प्रसून
175. आरती चालीसा संग्रह
176. भक्तामर भावना
177. बड़ा गाँव आरती चालीसा संग्रह
178. सहस्त्रकूट जिनार्चना संग्रह
179. विशद महा अर्चना संग्रह
180. विशद जिनवाणी संग्रह
181. विशद वीतरागी संत
182. काव्य पुञ्ज
183. पञ्च जाप्य
184. श्री चँवलेश्वर का इतिहास एवं पूजन चालीसा संग्रह
185. बिजोलिया तीर्थपूजन आरती चालीसा संग्रह
186. विराटनगर तीर्थपूजन आरती चालीसा संग्रह

नोट-उपरोक्त विधानों में से आप अधिकाधिक पूजन विधान कर अथाह पुण्य का अर्जन करें। - मुनि विशालसागर